श्रीगौरकरुणाने अबाधगति अर्थात् बिना किसी रोक-टोकके अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा करते हुए प्रसारित होकर प्रबल बाढ़के समान समस्त जगतको उसी दुर्लभ प्रेमामृतमें आप्लावित कर दिया। श्रीमन्महाप्रभुने अपनी असमोर्ध्व करुणाको मुक्त कर दिया। श्रीगौरहरिने अपनी करुणा शक्तिसे कह दिया "करुणा! मैंने तुम्हारे निकट आत्मसमर्पण कर दिया है। तुम जिस दिशामें जितनी दूर जाना चाहती हो, [जाओ और वहाँ जाकर] अपराधी, विमुख, तटस्थ, श्रद्धालु, अश्रद्धालु, साधारण भक्त और विशेष भक्त सभीको प्रेमकी बाढ़में डुबो दो।"

श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन
GVP

।। श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः ।।

श्री श्री भागवत पत्रिका

वर्ष-८ राष्ट्रभाषा हिन्दीमें श्रीश्रीरूप-रघुनाथकी वाणीकी एकमात्र वाहिका संख्या-(३-४)

विरह-विशेषांक-३

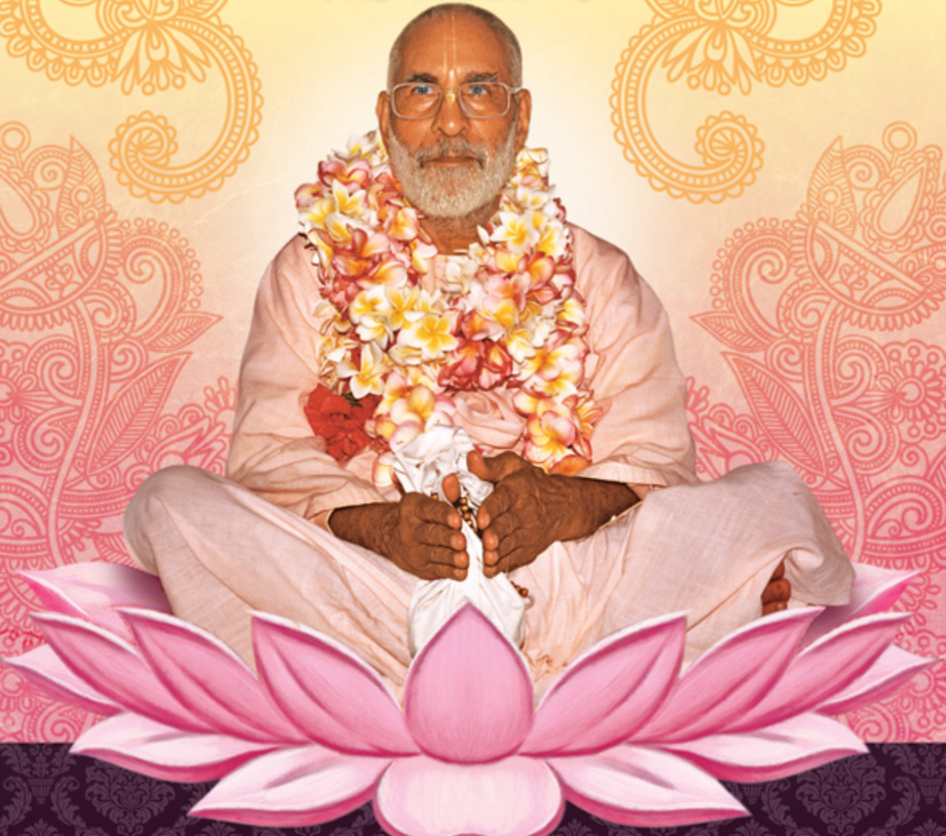

वर्ष ८ | श्रीगौराब्द ५२५, त्रिविक्रम–वामन मास
वि. सं. २०६८, ज्येष्ठ–आषाढ़ मास; सन् २०११, १८ मई–१५ जुलाई | संख्या ३–४

विषय–सूची

विरह–विशेषांक (संख्या–३)

श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण महोदयाष्टकम् ४
डॉ. वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी

अन्यान्य प्रमुख गौड़ीय–वैष्णवोंकी पुष्पाञ्जली ९

"परमभागवतजन साक्षात् तीर्थस्वरूप हैं" ९
श्रीमद्भक्तिजीवन आचार्य महाराज

श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजकी आविर्भाव तिथि पूजामें दीनकी वाणीरूपी पुष्पाञ्जलि............ १४
श्रीमद्भक्तिसर्वस्व गोविन्द महाराज

पूज्यपाद महाराजजीके चरणोंमें आन्तरिक पुष्पाञ्जली २०
श्रीमद्भक्तिविकास गोविन्द महाराज

आन्तरिक कृतज्ञता.. २२
श्रीमद्भक्तिविबुध बोधायन महाराज

व्रजके विख्यात विद्वानोंकी पुष्पाञ्जली २४

परहितकर्ता पूज्यश्री महाराजजीकी मेरे प्रति कृपा... २५
डॉ. वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी

महान युगपुरुष तथा वर्तमान आचार्योंमें अग्रगणीय–श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज २९
डॉ. गोस्वामी अच्युत लाल भट्ट

दिव्यसूरि पूज्य महाराजश्री अदृश्य नहीं, बल्कि विशिष्टरूपमें श्रीकृष्णके धाममें विराजमान ३५
श्रीविष्णु पाण्डे (शास्त्रीजी)

पूज्य महाराजश्री–रागानुगा–भक्तिकी जीती–जागती (जीवन्त) प्रतिमूर्ति.. ४१
गोस्वामी श्रीदीपक कुमार भट्ट

वाणी–वैशिष्ट्य–सम्पद्–१

[श्रील गुरुदेव और श्रीमन्महाप्रभु]

श्रीश्रीमन्महाप्रभुके दानकी विशेषता..................... ४७
श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

श्रीश्रीभागवत पत्रिकाकी नयी Website ६३
श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके ग्राहकोंसे वार्षिक सदस्यता–शुल्क भुगतानके लिए निवेदन ६४

संस्थापक एवं नियामक

नित्यलीलाप्रविष्ट परमहंस ॐ विष्णुपाद
अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके

अनुगृहीत

नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद
श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

प्रेरणा-स्रोत
नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद
श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराज

सम्पादक—श्रीमाधवप्रिय दास ब्रह्मचारी,
श्रीअमलकृष्ण दास ब्रह्मचारी

प्रचार सम्पादक—त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त वन महाराज,
त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त सिद्धान्ती महाराज

प्रचार सह-सम्पादिका—श्रीयुता उमा देवी दासी,
श्रीयुता सुचित्रा देवी दासी

सहकारी सम्पादक संघ—

(१) डॉ. श्रीवासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी, पी-एच. डी., डी. लिट्. (संघपति)
(२) डॉ. श्रीअच्युतलाल भट्ट, एम. ए., पी-एच. डी.
(३) त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त तीर्थ महाराज
(४) डॉ. (श्रीमती) मधु खण्डेलवाल, एम. ए., पी-एच. डी.
(५) श्रीपरमेश्वरी दास ब्रह्मचारी 'सेवानिकेतन'
(६) श्रीपुरन्दर दास ब्रह्मचारी 'सेवाविग्रह'

कार्याध्यक्ष—श्रीपाद प्रेमानन्द दास ब्रह्मचारी 'सेवारत्न'

कार्यकारी मण्डल—श्रीविजयकृष्ण दास ब्रह्मचारी, श्रीमदनमोहनदास ब्रह्मचारी, श्रीप्राणकृष्णदास ब्रह्मचारी, श्रीगौरराजदास ब्रह्मचारी, श्रीदामोदरदास ब्रह्मचारी, श्रीसञ्जय दास ब्रह्मचारी, श्रीजगदीशप्रसाद दासाधिकारी, भक्त सोनु

ले-आउट और डिजाइन—श्रीकृष्णकारुण्य दास ब्रह्मचारी, श्रीविकास ठाकुर

प्रकाशक—त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त माधव महाराज

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ
जवाहर हाट, मथुरा-२८१००१ (उ. प्र.)
दूरभाष : 08791273306

श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति ट्रस्टकी ओरसे
त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त माधव महाराज द्वारा
श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, जवाहर हाट, मथुरासे प्रकाशित।

Visit us at:
www.bhagavatpatrika.com
e-mail:
mathuramath@gmail.com,
vijaykrsnadas@gmail.com

विरह–विशेषांक
(संख्या–३)

श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण

डॉ. वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी, डी.लिट्, सप्ताचार्य

श्रील श्रीभक्तिवेदान्त नारायण महोदयम्।
युगाचार्य प्रतिष्ठायां भजे ह्यानन्दसंस्थितम्॥१॥

इस कार्तिक मासकी शुक्ल सप्तमीके दिन (३१ अक्टूबर २००३ को) अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराजको बरसाना धाममें व्रजवासियोंके द्वारा 'युगाचार्य' सम्मान–पदसे गौरवान्वित किया गया है। आज कार्तिक शुक्ल त्रयोदशीके दिन (६ नवम्बर २००३ को) श्रीवृन्दावन स्थित आनन्द धाममें विराजित उनको मैं अनेक नमन करता हूँ॥१॥

महोदयाष्टकम्

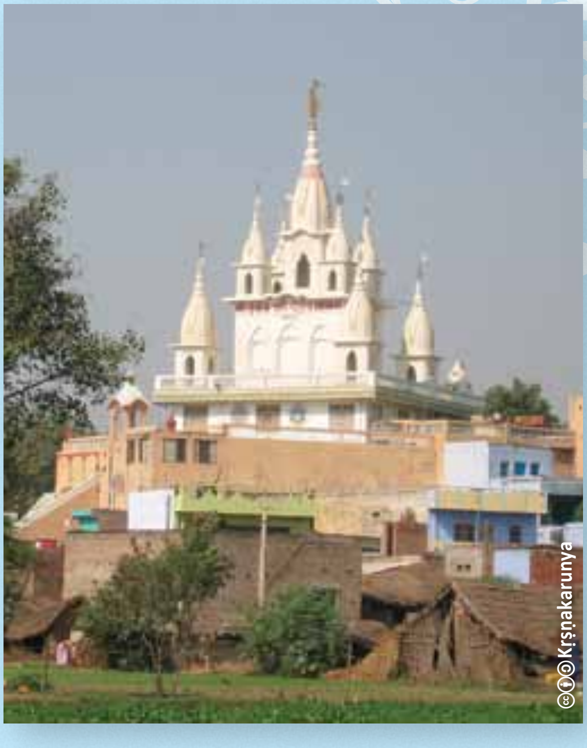

श्रीचैतन्य कृपापात्रं व्रजधाम प्रियं सदा।
दुर्वासा मन्दिरोद्धार कीर्तिध्वजमहं भजे॥२॥

श्रीचैतन्य महाप्रभुके कृपापात्र, सर्वदा व्रजधामके प्रेमी, मथुरा स्थित प्राचीन श्रीदुर्वासा मन्दिरके जीर्णोद्धार कार्यको करके भव्य–मन्दिर निर्माणकी कीर्तिरूपी पताकाको धारण करनेवाले आचार्यवर श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण महाराजकी मैं वन्दना करता हूँ॥२॥

यद् यात्राप्रेमतस्तुष्टे राधाकुण्डे पयोऽभवत्।
श्रीराधास्नेहसंपुष्टो वन्द्यः श्रीनारायणः॥३॥

इस कार्तिक मासमें व्रजमण्डल परिक्रमा करते हुए जब श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण महाराजजी विभिन्न देशोंके भक्तोंके साथ श्रीराधाकुण्डकी ओर गये, तो ऐसा प्रतीत हुआ मानो श्रीराधाकुण्डका जल दुग्ध[१] [की भाँति परम निर्मल] बन गया हो। वह दुग्ध मानो उनके प्रति श्रीराधारानीके स्नेह और वात्सल्यका प्रतीक हो, ऐसे श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण महाराजजी हमारे वन्दनीय हैं॥३॥

१ वर्ष २००३ ई. में श्रील गुरुदेवकी इच्छानुसार श्रीराधाकुण्डके जलको जर्मनीसे मँगाये गये यन्त्रके माध्यमसे साफ किया गया था।

श्रीनारायणभट्टैश्च तथा रूपसनातनैः।
यथा चैतन्य सच्छिष्यैस्तथोद्धारे भजे मुनिम्॥४॥

व्रजके उद्धारमें जैसे श्रीनारायण भट्टजी तथा श्रीचैतन्य महाप्रभुके प्रमुख शिष्य श्रीलरूप और श्रीलसनातन आदि गोस्वामियोंने योगदान दिया, वैसे ही व्रजकी पुण्य लीलास्थलियोंके उद्धारक मुनि श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण महाराजजीको मैं नमस्कार करता हूँ॥४॥

श्रीविशाखा कुण्ड

श्रीमाण्डीर वट

कालिय दह

वृन्दावनस्थिते ख्याते ह्यानन्दधाममञ्चके।
प्रतिष्ठाकारकं वन्द्यं नारायण मुनिं भजे॥५॥

श्रीवृन्दावन धाममें नवनिर्मित आनन्द–धाममें अपने करकमलोंसे श्रीश्रीराधा–श्यामसुन्दरजी एवं अन्य विग्रहोंकी स्थापना करनेवाले इन श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण महाराजजीको मैं नमन करता हूँ॥५॥

वेदवेदान्ततत्त्वज्ञः सर्वशास्त्रविशारदः।
मध्वगौडीयसिद्धान्तरत्नमालधरं भजे॥६॥

वेद और वेदान्तके तत्त्वज्ञानी, समस्त–शास्त्रोंके तात्पर्यमें निष्णात, मध्व–गौड़ीय–सम्प्रदायके सिद्धान्तोंकी रत्न–मालाको धारण करनेवाले श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण महाराजजीको मैं प्रणाम करता हूँ॥६॥

जैवधर्मे कृत रतिं माययारहितं मुनिम्।
भगवद्धर्म चर्चासु निमग्नं संभजे मुदा॥७॥

जैवधर्म आदि अनेक ग्रन्थोंका प्रकाशन करनेवाले, मायाके स्पर्शसे रहित मुनि तथा सर्वदा भगवद्धर्मकी चर्चामें निमग्न इन श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण महाराजकी मैं सहर्ष वन्दना करता हूँ॥७॥

भक्तिवेदान्त वन्द्यं तं कृष्णदेवप्रियं सदा।
नानादेश नरैः पूज्यं नारायणमहं भजे॥८॥

जो भगवान् श्रीकृष्णदेवके नित्य प्रिय हैं, जो विभिन्न देशोंके भक्तोंके पूज्य गुरु हैं, उन वन्दनीय श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण महाराजको मैं नमन करता हूँ॥८॥

शिष्याभिप्रायमालम्ब्य वासुदेवेन धीमता।
ऊर्जे शुक्लत्रयोदश्यां मङ्गलाशासनं कृतम्॥९॥

श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण महाराजजीके शिष्यवत् भावनाके अनुसार मुझ श्रीवासुदेवकृष्ण चतुर्वेदीने कार्तिक शुक्ल त्रयोदशीके दिन श्रीवृन्दावन स्थित आनन्दधाममें आयोजित सभामें मञ्चपर ही इस मङ्गलवाचनरूपी अष्टककी रचनाकर समर्पित किया है॥९॥

[श्रीभगवत पत्रिका वर्ष—४७,
संख्या—११ से संग्रहीत]

[श्रीवासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी पी.एच.डी, डी.लिट्, साहित्यरत्न व्रजके प्रख्यात विद्वान, यू.पी रत्न आदि उपाधियोंसे विभूषित और सप्ताचार्य हैं। ये 'श्रीश्रीभागवत–पत्रिका' में सहकारी सम्पादक संघके संघपतिके रूपमें गत ४६ वर्षोंसे अपनी अभूतपूर्व सेवाएँ अर्पित कर रहे हैं।]

“परमभागवतजन साक्षात् तीर्थस्वरूप हैं”

श्रीमद्भक्तिजीवन आचार्य महाराज

(श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीकी व्यास–पूजाके उपलक्ष्यमें लिखित)

महातीर्थ स्वरूप शुभ आविर्भाव तिथिकी उपस्थिति

महाराज श्रीयुधिष्ठिरने परमभागवत श्रीविदुरजीसे कहा था—

भवद्विधा भागवतास्तीर्थभूताः स्वयं विभो।
तीर्थीकुर्वन्ति तीर्थानि स्वान्तःस्थेन गदाभृता॥

(श्रीमद्भा० १/१३/१०)

हे प्रभो! आप जैसे भागवतजन तो स्वयं ही तीर्थ–स्वरूप होते हैं, क्योंकि वे अपने अन्तःकरणमें स्थित गदाधारी भगवान्‌की पवित्रताके बलसे पापियोंके पाप द्वारा मलिन समस्त तीर्थोंको पुनः पवित्र कर देते हैं।

श्रीयुधिष्ठिर महाराज द्वारा श्रीविदुरजीको इस प्रकार कहनेका तात्पर्य है—आप जैसे महाभागवतोंके लिए तीर्थ–भ्रमणकी क्या आवश्यकता है? अर्थात् यद्यपि गदाधारी भगवान्‌को हृदयमें धारण करके आप स्वयं ही तीर्थ–स्वरूप बन गए हैं, तथापि आप जैसे महाभागवतगण क्यों तीर्थ–भ्रमण किया करते हैं? निश्चित रूपसे तीर्थ–स्थानोंको तीर्थका गुण प्रदान करनेके लिए ही आप तीर्थ–भ्रमण करते हैं।

इसी प्रकार परमपूज्यपाद श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजकी शुभ आविर्भाव तिथि (दिवस) रूपी महातीर्थ उपस्थित हुआ है। [अर्थात् पूज्यपाद श्रील नारायण महाराज शुभ मौनी अमावस्या तिथि (दिवस) रूपी तीर्थको महातीर्थ बनाते हुए आविर्भूत हुए हैं।]

संक्षिप्त जीवन–चरित्र

श्रील नारायण महाराज बिहार प्रदेशके बक्सर जिलेमें शुद्ध ब्राह्मण परिवारमें आविर्भूत हुए थे। जब वे सरकारी पुलिस अफसरके रूपमें बिहारके साहेबगंज क्षेत्रमें कार्यरत थे, उस समय मेरे परमाराध्य गुरुदेव श्रीमद्भक्तिकमल मधुसूदन गोस्वामी महाराज (उस समय श्रीनरोत्तमानन्द ब्रह्मचारी) बिहारके राजमहल आदि स्थानोंमें प्रचार करनेके उपरान्त साहेबगंजमें आकर प्रचार कर रहे थे। उसी समय पूज्यपाद महाराजने घटनाक्रमसे श्रील गुरुदेवका साक्षात्कार प्राप्त किया। पूज्यपाद नारायण महाराज श्रीमन्महाप्रभुके अत्यन्त निजजन हैं, इसीलिए साधुके दर्शनमात्रसे आकृष्ट होकर उन्होंने श्रील गुरुदेवके निकट सम्पूर्ण रात्रि हिन्दी और अंग्रेजीमें प्रश्न किये तथा उत्तरमें श्रीलगुरुदेवसे समग्र रात्रि हरिकथा श्रवण की। ऐसी

हरिकथाके फलस्वरूप पूज्यपाद महाराजने संसारके प्रति पूर्ण वैराग्य प्राप्त किया तथा उसी मुहूर्तसे संसारके समस्त आकर्षणोंको परित्यागकर श्रील गुरुदेवके साथ श्रीधाम नवद्वीपके तेघरीपाड़ामें स्थित श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके श्रीदेवान्द गौड़ीय मठमें उपस्थित हुए। तत्पश्चात् श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके आचार्य–सभापति नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीके श्रीचरणकमलोंका आश्रय ग्रहण करके वैष्णवी दीक्षा और संस्कार आदि प्राप्त किये। परवर्तीकालमें अपने गुरुपादपद्म श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीसे संन्यास ग्रहण कर 'श्रीभक्तिवेदान्त नारायण महाराज' के नामसे विख्यात हुए।

अप्राकृत गुणावली

अपने परम–सौभाग्यके बलसे मैंने पूज्यपाद नारायण महाराजके अप्राकृत सान्निध्यमें मथुरामें स्थित श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें कुछ दिन तक अवस्थान किया था। मैं जितने दिन तक वहाँ था, पूज्यपाद महाराजके अतुलनीय स्नेहपूर्ण व्यवहारसे मोहित रहा। वे मुझे अपने संगमें लेकर निकटस्थ पार्कमें भ्रमण करने जाते। उस समय मैं उनसे भागवतके विभिन्न प्रसंगोंकी कथा श्रवण किया करता। वे भक्त–विरोधी व्यक्तिके निकट वज्रसे भी कठोर एवं भक्तोंके निकट पुष्पके समान अत्यन्त कोमल व्यवहार युक्त थे। उनके द्वारा आलस्य रहित होकर सब समय वर्णित हरिकथा–प्रसङ्ग और तत्त्व–कथामें मेरा समस्त समय व्यतीत होता। पूज्यपाद महाराजके श्रीमुखसे निकली हुई अमृतमयी हरिकथाको जिसने भी श्रवण किया है, वे अवश्य ही उनसे आकृष्ट हुए हैं। पूज्यपाद महाराज वर्तमान कालमें समग्र विश्वमें गौरवाणीके एक श्रेष्ठ प्रचारक थे। उनके अमृतमय मधुर व्यवहार एवं वैष्णवोचित आचारने समग्र विश्वको आकृष्ट किया है। उन्होंने विश्वमें बहुतसे पतित व्यक्तियोंका उद्धार किया है। वर्तमानमें ऐसे महाभागवत महापुरुषका सान्निध्य प्राप्त करके भी दुर्भाग्यवशतः हम पारमार्थिक विषयमें अपना उपकार नहीं कर पा रहे हैं। इसका कारण है कि वर्तमान कालमें सभी ऐश्वर्य रूपी दीनता (अर्थात् वैभव प्रदर्शनमयी पतित अवस्था) को भोग रहे हैं, किन्तु हमारा प्रयोजन दीनता रूपी ऐश्वर्य (अर्थात् दैन्य रूपी वैभव) है,

वर्तमान कालमें सभी ऐश्वर्य रूपी दीनता (अर्थात् वैभव प्रदर्शनमयी पतित अवस्था) को भोग रहे हैं, किन्तु हमारा प्रयोजन दीनता रूपी ऐश्वर्य (अर्थात् दैन्य रूपी वैभव) है, ऐश्वर्य रूपी दीनता नहीं। श्रीमन्महाप्रभु हमें दीनता रूपी ऐश्वर्य देने आये थे एवं 'तृणादपि सुनिचेन' श्लोक ही इसकी प्रथम भित्ति (नींव) है।

ऐश्वर्य रूपी दीनता नहीं। श्रीमन्महाप्रभु हमें दीनता रूपी ऐश्वर्य देने आये थे एवं 'तृणादपि सुनिचेन' श्लोक ही इसकी प्रथम भित्ति (नींव) है।

ऐश्वर्य रूपी दीनता (पतित-अवस्था) का एक दृष्टान्त

एक समय श्रीरामानुजाचार्य वेंकटाचल (तिरुपति) में भगवान् श्रीबालाजीका दर्शन करनेके लिए जा रहे थे। उसी वेंकटाचल पर्वतके नीचे उनके दो गृहस्थ शिष्य रहा करते थे। उनमेंसे एक शिष्य बहुत दरिद्र था और एक शिष्य धनी था। जब दोपहर होनेको आयी, तब श्रीरामानुजाचार्य एक पेड़के नीचे बैठकर विश्राम करने लगे तथा उन्होंने अपने दो सेवकोंको धनी शिष्यके घर भेजकर अपने आगमनकी सूचना देनेको कहा।

उन दोनों सेवकोंने उस धनी शिष्यके द्वारपर पहुँचकर उसे बतलाया—'आपके घरमें गुरुदेव श्रीरामानुजाचार्य आ रहे हैं, आप शीघ्र ही उनके लिए व्यवस्था कीजिए।' यह समाचार सुनकर धनी शिष्यने अपने घरके भीतर जाकर अपनी पत्नीको गुरुदेवके आगमनका समाचार दिया तथा गुरुदेवके लिए क्या-क्या उत्तम सेवाएँ की जाएँ एवं क्या-क्या ले आना चाहिए—इस प्रकार वे दोनों उनके स्वागत और रहनेकी व्यवस्थाके विषयकी आलोचना करनेमें ही व्यस्त रहे। किन्तु ऐश्वर्य द्वारा गुरुदेवको मोहित करनेकी चिन्तामें मत्त रहनेके कारण बाहर आकर उन दोनों सेवकोंको 'श्रील गुरुदेवको शीघ्र ले आइए'—इस प्रकार कहना तक भी भूल गये। उन दोनों सेवकों द्वारा बहुत देर तक उनके घरके द्वारपर प्रत्युत्तरके लिए अपेक्षा करनेपर भी जब वह धनी शिष्य लौटकर नहीं आया, न ही उन्हें बैठनेके लिए कहकर आसन आदि प्रदान किया—ऐसा देखकर वे दोनों सेवक अपने गुरुदेवके निकट लौट आये तथा समस्त वृत्तान्त निवेदन किया। उसे श्रवण कर श्रीरामानुजाचार्यने कहा—ऐश्वर्यके मदसे इस प्रकार होता है। तुम दोनों अब शीघ्र मेरे दरिद्र शिष्य वरदाचार्यके घर जाकर उसे मेरे वहाँ आगमनकी सूचना दो।

दीनता रूपी ऐश्वर्यका दृष्टान्त

जब वे दोनों सेवक उस दरिद्र शिष्य वरदाचार्यके घरमें पहुँचे, तो उन्होंने देखा कि वरदाचार्य भिक्षामें गये हुए

थे, किन्तु उनकी पत्नी शतछिन्न (सौ स्थानोंसे फटे हुए) वस्त्रको पहनकर घरमें अवस्थित थी। उन दोनों सेवकोंने वरदाचार्यकी पत्नीको श्रीगुरुदेवके आगमनकी सूचना दी। 'श्रीगुरुदेव आ रहे हैं'—यह सुनकर वरदाचार्यकी पत्नी विह्वल हो गयी। उसने उन दोनों सेवकोंको प्रणाम कर निवेदन किया—'गुरुदेवको शीघ्र ले आइए।'

उन दोनों सेवकोंके चले जानेपर वरदाचार्यकी पत्नी चिन्ता करने लगी कि हमारा परम सौभाग्य है कि गुरुदेव हमारे घरमें आ रहे हैं, किन्तु हमारे घरमें उन्हें देनेके लिए एक मुट्ठी चावल भी नहीं है। हे भगवान्! मैं क्या देकर श्रीगुरुदेवकी सेवा करूँगी? उसी समय उसे स्मरण हुआ कि उसके घरके पास ही एक धनी सेठ है। वह उसके रूप और यौवनको देखकर उसे भोग करनेके उद्देश्यसे अनेक प्रलोभन दिया करता था, किन्तु महासती—साध्वी स्त्री होनेके कारण उसे प्रलोभित नहीं कर सका।

उस सती साध्वी स्त्रीने सोचा कि इस रक्त, माँस, मल, मूत्रादिसे पूर्ण नश्वर जड़ देहके विनिमयसे यदि गुरुकी सेवा कर पायी, तभी मेरा यह शरीर धन्य होगा। तब उसने तुरन्त उस सेठके निकट जाकर कहा—तुम इतने दिनों तक मुझसे जो कहा करते, उसमें मेरी सहमति नहीं थी, परन्तु आज मैं तुम्हारी बातसे सहमत तभी होऊँगी, जब तुम मेरे गुरुदेवकी सेवाके लिए समस्त द्रव्य एवं उसके साथ मेरे पहननेके लिए वस्त्र दोगे। इसे सुनकर उस सेठने उसी समय समस्त खाद्य द्रव्य तथा नये वस्त्र आदि उसके घर पहुँचा दिये।

वरदाचार्यकी पत्नीने उन समस्त द्रव्योंसे अत्यधिक आनन्दपूर्वक श्रीगुरुदेवकी सेवा की। भिक्षासे वापस लौटकर वरदाचार्यने घरमें श्रीगुरुदेवको विश्राम करते हुए तथा उनके लिए उत्तम सेवादिका दर्शन किया। उनकी पत्नी उनके लिए प्रतीक्षा कर रही थी। वरदाचार्यने अपनी पत्नीसे पूछा—तुमने कहाँसे श्रीगुरुदेवके लिए इतनी उत्तम सेवाकी व्यवस्था की? उत्तरमें उनकी पत्नीने समस्त वृत्तान्त कह सुनाया। उसे श्रवण करनेमात्रसे वरदाचार्य रोते—रोते कहना लगा—तुम धन्य हो! इस नश्वर देहके द्वारा तुमने गुरुसेवारूपी ऐसे महान कार्यको साधित किया है। मेरे इस निकृष्ट देहके द्वारा कुछ नहीं हो पाया। मैं चिर—वञ्चित रह गया।

उसके बाद उन दोनोंने आनन्दसे श्रीगुरुदेवके उच्छिष्ट प्रसादका सेवन किया। तत्पश्चात् अपने वचनको निभाते हुए वरदाचार्यकी स्त्री श्रीगुरुदेवका किञ्चित प्रसाद लेकर वरदाचार्यके साथ उस सेठके घर पहुँची। सेठके घर पहुँचकर वरदाचार्य दूरमें खड़े रहे और प्रतीक्षा करने लगे। ब्राह्मणीने प्रसाद लेकर सेठके घरके भीतर प्रवेश किया और उस सेठसे कहा—यह मेरे श्रीगुरुदेवका प्रसाद है, इसे थोड़ा सेवन करो। सेठ द्वारा उस प्रसादको ग्रहण करनेमात्रसे उसका हृदय परिवर्त्तित हो गया तथा वह उसी क्षण सती—साध्वी ब्राह्मणीके चरणोंमें गिरकर उससे क्षमा माँगने लगा। तत्पश्चात् वह भी श्रीरामानुजाचार्यका शिष्य बन गया।

वास्तव—सम्पद

महाप्रभुके द्वारा उपदिष्ट दीनता, सहिष्णुता, दूसरोंको मान देना—ये सभी हमारी महासम्पद हैं। जगत्के अर्थ आदि कभी भी हमारी वास्तव सम्पद नहीं हैं। जड़ीय ऐश्वर्यशाली व्यक्ति—भिखारी, अन्धा तथा लंगड़ा है। वह कभी भी गुरुसेवा या गुरुपूजा नहीं कर सकता, भगवान्की भी आराधना नहीं कर सकता। यह ऐश्वर्यरूपी दीनता (अर्थात् जड़ ऐश्वर्यके दम्भरूपी पतित अवस्था) जीवको भिखारी, दीन, अन्धा बनाकर रखती है, किन्तु दैन्यरूप (अर्थात् स्वयंको पतित और दीन अनुभव करने रूपी) विपुल ऐश्वर्यके द्वारा गुरुपूजा हो सकती है। जैसे श्रीमन्महाप्रभु लक्षपति अर्थात् एक लाख हरिनाम ग्रहण करनेवालेके अतिरिक्त अन्य किसीकी भी सेवा ग्रहण नहीं करते थे, उसी प्रकार श्रीहरिनाम प्रभु भी दीनतारूपी ऐश्वर्यसे रहित व्यक्तिकी सेवा ग्रहण नहीं करते, अर्थात् दीनता रूपी ऐश्वर्य न रहनेसे कोई भी यथार्थ हरिभजन—नामभजन नहीं कर सकता। जड़ ऐश्वर्यसे अभिमानी व्यक्ति वास्तवमें सम्पूर्णरूपसे दरिद्र होते हैं, वे गुरु और भगवान्को कुछ भी

नहीं दे सकते। उनके द्वारा कुछ देनेपर भी गुरु और भगवान उनकी सेवा ग्रहण नहीं करते।

अतएव ऐश्वर्यके मदमें भजन और सेवा ठीक–ठीक नहीं हो पाती। इसीलिए श्रीकुन्ती देवीने कहा है–'अकिञ्चनगोचर' अर्थात् 'हे भगवन्! आप केवल अकिञ्चनोंके लिए ही दृष्टिगोचर होते हैं।'

विरह पुष्पाञ्जलि

जिनकी आविर्भाव तिथिके उपलक्ष्यमें मैं यह प्रबन्ध लिख रहा था, प्रबन्ध लेखनके आरम्भमें वे इस जगत्में प्रकट थे, किन्तु अब प्रबन्ध समाप्तिके समय वे इस जगत्को त्याग कर सहस्र सहस्र भक्तोंको अश्रु–सागरमें निमज्जित करके नित्यलीलामें प्रस्थान कर गये हैं। बाह्य नेत्रोंसे दृष्टिगोचर न होनेपर भी पूज्यपाद श्रील नारायण महाराज अपनी महिमा और अपने द्वारा की गयी श्रीराधागोविन्दजीकी सेवाके माध्यमसे अपने भक्तोंके हृदयमें नित्य विराजमान रहेंगे। उनकी सेवामय मूर्तिका आदर्श, अभूतपूर्व वैष्णवता, भक्तिसिद्धान्तमें वज्रवत् दृढ़ता, अपने निजजनोंके प्रति उनकी स्नेहमय मूर्त्ति, समस्त वैष्णवों और विश्ववासियोंके प्रति उनकी कल्याणमय मूर्त्ति चिरदिन देदीप्यमान रहेगी।

आज उनके श्रीअभय चरणकमलोंमें यही प्रार्थना है कि वे मेरे प्रति और समस्त विश्वके प्रति प्रसन्न हों एवं आशीर्वाद करें कि हम श्रीगुरुपादपद्मके आश्रित रहकर नित्यकाल श्रीगौर–नित्यानन्द–श्रीराधागोविन्दकी श्रीचरणसेवामें नियुक्त रह सकें।

[पूज्यपाद श्रीमद्भक्तिजीवन आचार्य महाराज श्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके वर्त्म–प्रदर्शक गुरु नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिकमल मधुसूदन गोस्वामी महाराजके चरणाश्रित हैं। वे अपने गुरुदेव द्वारा स्थापित श्रीकृष्णचैतन्य मठके वर्तमान आचार्य हैं।]

श्रीलभक्तिवेदान्त आविर्भाव तिथि

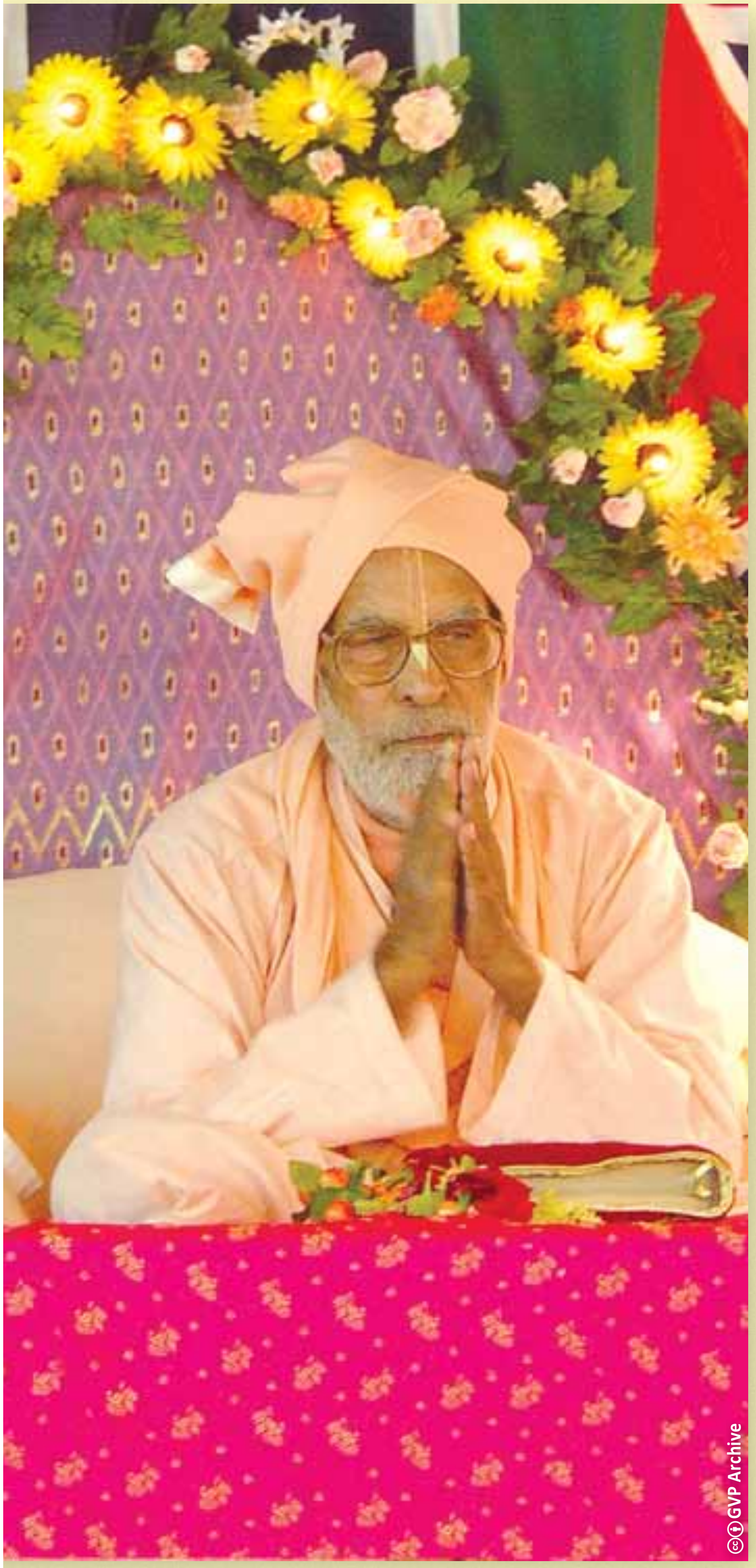

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी प्रणतिः

नमः ॐ विष्णुपादाय गौरकृष्णप्रियाय च।
श्रीमते भक्तिवेदान्त नारायणाय ते नमः॥१॥

श्रीगौरकृष्ण (गौर और कृष्ण) के प्रिय अथवा गौररूपी कृष्णके प्रिय ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामीको मैं पुनः पुनः प्रणाम करता हूँ॥१॥

रूपानुगरसज्ञाय रागभक्तिप्रदायिने।
विश्वप्रचारकोत्तमयतीन्द्राय नमो नमः॥२॥

श्रीरूपानुग-धाराके सेवारसके विषयको पूर्णतः जाननेवाले, व्रजकी रागभक्तिको प्रदान करनेवाले, विश्वप्रचारकोंमें प्रमुख तथा यतियोंके राजको मैं पुनः पुनः प्रणाम करता हूँ॥२॥

रमणमञ्जरीनाम्ना निकुञ्जयुगलार्चने।
विनोदसङ्गरङ्गाय धीमते प्रभवे नमः॥३॥

निकुञ्जभवनमें श्रीश्रीयुगलकिशोरकी प्रेम-सेवामें विनोदमञ्जरीके सङ्गमें 'रमणमञ्जरी' नामसे अनेक

नारायण गोस्वामी महाराजकी पूजामें दीनकी वाणीरूपी पुष्पाञ्जलि

श्रीमद्भक्तिसर्वस्व गोविन्द महाराज

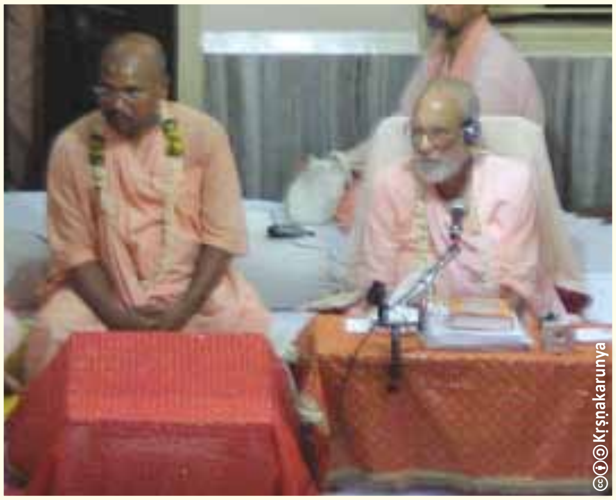

रङ्ग(विनोद)पूर्ण सेवाओंको करनेवाले, सुबुद्धिमान तथा प्रभावशाली श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजको मैं प्रणाम करता हूँ॥३ ॥

गुरु, आचार्य, देशिक, व्यास, विष्णुपादादि संज्ञाओंका तात्पर्य

श्रीगुरुपूजाका नामान्तर श्रीव्यासपूजा है। तत्त्वतः श्रीगुरुदेव व्यासदेवके अभिन्न विग्रह हैं एवं 'व्यास' कहलाने योग्य हैं, क्योंकि वे शरणागत शिष्यके हृदयमें वेदोंके अर्थोंका प्रकाश और विस्तार करते हैं। दिव्यज्ञानका उद्गीरण (उद्गार) करने हेतु उनको 'गुरु' कहते हैं; आचरण करके दूसरोंको आचरणमें स्थापन करने हेतु उनको 'आचार्य' कहते हैं; तत्त्व उपदेशक हेतु उन्हें 'देशिक' कहते हैं [देशिक शब्दका समास इस प्रकार हुआ है—'दिशति उपदिशति इति देशिकः' अर्थात् जो दिशानिर्देश या उपदेश प्रदान करते हैं, वे देशिक हैं]; वेदोंके अर्थका विस्तार करने हेतु उन्हें 'व्यास' कहते हैं [व्यास शब्दका समास इस प्रकार हुआ है—'व्यस्यते अनेन इति व्यासः' अर्थात् जिनके द्वारा वेदोंका अर्थ विस्तारित होता है, वे व्यास हैं] एवं विष्णुप्राप्ति कराने हेतु उन्हें 'विष्णुपाद' कहते हैं [विष्णुपाद शब्दका समास इस प्रकार हुआ है—'विष्णुःपद्यते लभ्यते येन स विष्णुपादः' अर्थात् जिनके द्वारा श्रीविष्णुके श्रीचरणकमलोंमें आश्रय प्राप्त होता है अथवा श्रीविष्णुकी प्राप्ति होती है, वे विष्णुपाद हैं]।

श्रीगुरुके विभिन्न स्वरूप

'गुरु कृष्णरूप हन शास्त्रेर प्रमाणे' (श्रीचैतन्य चरितामृत आदि १/४५) [अर्थात् शास्त्रोंके प्रमाणोंके अनुसार श्रीगुरुदेव श्रीकृष्णका ही रूप (प्रकाश) हैं।], 'आचार्यं मां विजानीयात्' (श्रीमद्भा० ११/१७/२७) [अर्थात् भगवान् श्रीकृष्णने उद्धवसे कहा—हे उद्धव! आचार्य (श्रीगुरुदेव) को मेरा स्वरूप जानो।] तथा 'गुरुं शान्तं उपासीत मदात्मकम्' (श्रीमद्भा० ११/१०/५) [अर्थात् मुझसे अभिन्न, शान्त गुरुकी उपासना करो।] पदोंमें श्रीगुरुदेवको कृष्णस्वरूपवान कहा गया है।

'शिक्षागुरु हन कृष्ण महान्त स्वरूपे' (श्रीचैतन्य चरितामृत आदि १/५८) [अर्थात् श्रीकृष्ण महान्त अर्थात् श्रेष्ठ भक्तके रूपमें शिक्षागुरु हैं।] तथा 'शिक्षागुरु भगवान् शिखिपुच्छमौलिः' (श्रीकृष्णकर्णामृत १) [अर्थात् मेरे शिक्षागुरु मयूरपुच्छधारी भगवान् भी जययुक्त हों।] पदसे श्रीकृष्णका शिक्षागुरुत्व स्थापित होता है।

तात्पर्य यह है कि श्रीकृष्ण ही स्वयं 'वर्त्म–देशिक गुरु' रूपमें धर्मका उपदेश प्रदान करते हैं, 'चैत्यगुरु' रूपमें धर्म–आचरण की प्रेरणा देते हैं, 'दीक्षागुरु' रूपमें इष्टमन्त्र दान करते हैं तथा 'शिक्षागुरु' रूपमें भजन रहस्यकी शिक्षा देते हैं। विषय–जातीय श्रीकृष्णके समान ही आश्रय–जातीय श्रीगुरु भी 'अखिलरसामृत मूर्त्ति' हैं। शरणागतजनोंका संसार मोचन करते हुए उन्हें कृष्णप्रेमामृतका पान कराकर श्रीकृष्ण–सेवामें नियुक्त करना ही गुरुका 'दयाकृत्य' अर्थात् दयारूपी कार्य है और अपने रसमें विशेषतः मधुररसमें सखी–मञ्जरी स्वरूपमें निकुञ्जविलासी श्रीश्रीराधागोविन्दका सेवामृत पान ही उनका 'स्वरूपकृत्य' अर्थात् उनके निज–स्वरूपका कार्य है। फलतः श्रीगुरुदेव दास्यरसमें रक्तक–पत्रक, सख्यरसमें सुबलादि, वात्सल्यरसमें नन्द–यशोदादि तथा मधुररसमें मूल आधार श्रीराधा तथा ललितादिके स्वरूप हैं।

श्रीगुरुका तत्त्वज्ञत्व, रसज्ञत्व तथा गोस्वामित्व

श्रील प्रभुपाद कहा करते थे—'गुरुदेव मधुर रसमें वार्षभानवी (श्रीमती राधारानी) हैं।' गौड़ीय गुरुवर्ग श्रीराधाकी नित्यसखी (मञ्जरी) स्वरूपमें ही निकुञ्जमें युगलसेवा परायण हैं। वस्तुतः गुरुका 'तत्त्वज्ञत्व'—शिष्यको भलीभाँति तत्त्वका बोध कराने और उसका कर्त्तव्य निर्णय करनेके लिए है, उनका 'रसज्ञत्व'—कृष्ण रसास्वादनके लिए है तथा 'गोस्वामित्व'—रसास्वादनकी नैष्ठिकता और निरन्तरता स्थापित करनेके लिए है। इसका कारण है कि गोदासगण (इन्द्रियोंके दास) निकुञ्जसेवामें नितान्त अयोग्य, अनधिकारी और अपराधी हैं। श्रीकृष्णसेवामें एकान्तिकगण ही यथार्थ 'गोस्वामी' कहलाने योग्य हैं। संसारके अनुरागी और संसाररूपी रोगग्रस्त व्यक्तियोंका गुरुत्व तो है ही नहीं, अपितु शिष्यत्व भी नहीं है। जो श्रीकृष्ण–तत्त्व–रसामृतमें उन्मत्त हैं, वही गुरु कहलाने योग्य हैं। ऐसे श्रीगुरुदेव भगवत्स्वरूपमें ही (अर्थात् स्वयं भगवत् स्वरूप हैं, ऐसे ज्ञानसे) नित्यसेव्य हैं। बाह्यतः गुरु और शिष्यके परस्पर प्रभु और दास सम्बन्धसे युक्त होनेपर भी स्वरूपमें वे दोनों सख्यभाव सम्पन्न होते हैं अर्थात् गुरु ही नित्यलीलामें गुरुरूपा सखी या सखा रूपमें शिष्यके सङ्गमें सेवारस पान करनेमें आसक्त होते हैं।

संक्षिप्त चरित्र

श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज ऐसे ही एक गुरुपादपद्म हैं। उनका आविर्भाव वर्ष १९२१ ईसवीमें माघ मासकी मौनी अमावस्याके दिन बिहार प्रदेशमें एक सम्भ्रान्त ब्राह्मण–वैष्णव परिवारमें हुआ। उन्होंने विशेष सफलता और कुशलताके साथ अध्ययन समाप्त करके संसार जीवनमें प्रवेश किया, किन्तु प्रबल कृष्णभजन पिपासासे वे सांसारिक ममता–बन्धनादिका परित्याग करके श्रील प्रभुपादके पार्षदप्रवर श्रीलभक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके श्रीचरणोंमें उपनीत (उपस्थित) हुए। श्रीनाम–मन्त्रादि दीक्षाके उपरान्त उनका नाम श्रीगौरनारायण 'भक्तबन्धव' हुआ तथा तबसे वे नियमित भावसे भजन–साधनमें मनोनिवेश करने लगे। कुछ दिनोंमें ही उन्होंने गौड़ीय–गोस्वामियोंके शास्त्रादिके तात्पर्योंपर विशेष अधिकार प्राप्त कर किया। वे अपने गुरुपादपद्म श्रीलभक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज द्वारा वर्ष १९५४ ई॰ में मथुरा स्थित श्रीकेशवजी गौड़ीय मठके अध्यक्ष पदपर नियुक्त हुए।

अप्राकृत गुणावली

उनका आदर्श वैष्णवचरित्र, मधुर व्यवहार और भजन–निष्ठा सुकृतिवानजनोंको मुग्ध करते हैं। तत्त्वतः अकिञ्चनाभक्तिके बलसे तथा 'कृष्णभक्तमें कृष्णके समस्त गुण सञ्चरित होते हैं' (श्रीचैतन्यचरितामृत मध्य

©Saradā dāsī

पूज्यपाद महाराज 'अतन्निरसन' अर्थात् रूपानुग विरुद्ध अपसिद्धान्तोंके निराकरण और 'तदनुशीलन' अर्थात् विशुद्ध रागानुग भजनके आदर्शमय आचार्यप्रवर थे।

***

वे करुणावतार नित्यानन्दप्रभुके दासानुदासके रूपमें अदोषदर्शी, महाकारुणिक, क्षमाशील और पतितपावनादि गुणोंके धाम हैं।

२२/७५) के विचारसे वे ऐसे सद्गुणोंके आलय (भण्डार) हैं। 'कलिकालेर धर्म—कृष्ण—नामसंकीर्त्तन। कृष्णशक्ति बिना नाहे तार प्रवर्त्तन।' (श्रीचैतन्यचरितामृत अन्त्य ७/११) [अर्थात् कलियुगका धर्म है—नाम संकीर्त्तन। कृष्णशक्तिके बिना इसका प्रवर्तन नहीं हो सकता]—इस न्यायके अनुसार वे कृष्णशक्ति हैं, इसीलिए वे विश्वप्रचारकोंमें प्रमुख हैं। उनके आचार, विचार और प्रचारका वैशिष्ट्य ही कृष्णशक्तित्वका परिचायक है। रागानुगा—भक्तिका विशुद्ध रूपानुगभावसे सर्वत्र प्रचार करनेवालोंमें वे प्रधान प्रचारक थे। उत्तम कुलमें जन्म, ऐश्वर्य (वैभव), श्रुत (विद्या), श्री (सौदर्न्य)के अधिकारी होते हुए भी वे निरभिमानी तथा अमानी (स्वयं सम्मानकी इच्छा न करनेवाले) और मानद (सभीको सम्मान देनेवाले) आदि गुणोंसे युक्त चरित्रवाले थे—यही उनकी श्रेष्ठतम वैष्णवताका ज्वलन्त प्रमाण है। वे श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके प्रचारकोंमें प्रधान थे। श्रीकृष्णकी इच्छासे वे श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति ट्रस्टके सभापति—आचार्यके रूपमें विश्वविख्यात हुए। वे श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुके अवदान वैशिष्ट्यका कीर्त्तन करनेवालोंमें श्रेष्ठतम तथा श्रीश्रीराधामाधवके अपार माधुर्यामृतका पान करनेवाले होनेके कारण जगद्गुरु थे।

श्रीचैतन्यदेवके हृदयगत 'रागमार्ग भक्ति लोके करिते प्रचारण' (श्रीचैतन्यचरितामृत आदि ४/१५) [अर्थात् जगत्में रागमार्ग भक्तिके प्रचार] को सम्पादित करनेके रूपमें वे सारस्वतकुलके भूषणस्वरूप थे। पूज्यपाद महाराज 'अतन्निरसन' अर्थात् रूपानुग विरुद्ध अपसिद्धान्तोंके निराकरण और 'तदनुशीलन' अर्थात् विशुद्ध रागानुग भजनके आदर्शमय आचार्यप्रवर थे। नैतिकता और नैष्ठिकतामें उनकी वैष्णवता समुज्ज्वल और प्राञ्जल (स्वच्छ) थी। नीति (विधि) और रुचि (राग)का सौन्दर्य उनके भजन—आदर्शमें देदीप्यमान था। उनका 'गुर्वात्मदैवत्व' अर्थात् 'गुरु ही अपनी आत्मा और आराध्य हैं' विचारमें प्रतिष्ठित होना विद्वत्प्रशंसित् है एवं उनका 'सतीर्थसख्य' अर्थात् गुरुभ्राताओंके प्रति सख्य—भाव तथा 'शिष्यभक्तवात्सल्य' अर्थात् शिष्यों और भक्तोंके प्रति वात्सल्य—भाव ध्यान देने योग्य हैं। वे करुणावतार नित्यानन्दप्रभुके दासानुदासके रूपमें अदोषदर्शी, महाकारुणिक, क्षमाशील और पतितपावनादि गुणोंके धाम थे। 'प्रोज्झितकैतव' अर्थात् कैतव धर्मको समूल नष्ट कर भागवतधर्मके प्रसाद (कृपा)से वे 'निरस्तकुहक' अर्थात् मायाके

छलसे रहित चरितवाले थे। यद्यपि उनका गुरुत्वरूपी गौरव सब प्रकारसे रूपानुगदासत्व रूपी वैभवसे युक्त था, तथापि उनका व्यक्तित्व विपुल बालसुलभ अर्थात् मान, मोह, मत्सरतासे रहित था। उन्हें प्राप्त करके उनका मातृ–पितृ कुल आदि भी धन्य हुआ है।

जन्मानि च कर्माणि च धनानि च गुणानि च।
वरवैष्णवमासाद्य सफलतां प्रयान्ति हि॥

अर्थात् जन्म, कर्म, धन और गुण एक उच्च वैष्णवका संग प्राप्त कर निश्चित् ही सफल हो जाते हैं।

न वैष्णवं विना बन्धुर्न वैष्णवं विना गुरुः।
न वैष्णवं विना शास्त्रं न वैष्णवं विना गतिः॥

अर्थात् वैष्णवके अतिरिक्त कोई बन्धु नहीं है, वैष्णवके बिना कोई गुरु नहीं है, वैष्णवके बिना शास्त्र नहीं है तथा वैष्णवके अलावा गति भी नहीं है।

ईष्टो गुरोः परो नास्ति गुरोर्ज्ञानं परं स्मृतम्।
गुरोर्दास्यं परं लोके गुरौ रतिः परागतिः॥

गुरुकी अपेक्षा और कोई इष्ट नहीं हैं, गुरु द्वारा प्रदत्त ज्ञान ही परम ज्ञान है, गुरुदास्य ही परतम दास्य है तथा गुरुमें रति ही परागति कही जाती है।

श्रीचैतन्य महाप्रभुकी मनोऽभीष्ट सेवा

श्रीचैतन्य महाप्रभुके विशेष कृपापात्र होनेके कारण पूज्यपाद महाराज निरुपाधिक अमानी–मानद धर्मके अधिकारी थे। श्रीरूपानुग होनेके कारण उन्होंने श्रीचैतन्यदेवके मनोऽभीष्टको स्थापित और विस्तारित करनेके लिए देश और विदेशमें सर्वत्र श्रीगौरसुन्दर और श्रीश्रीराधाविनोदविहारीजीके विग्रहोंकी सेवा आदि प्रकाशित की, भक्ति–सदाचारका प्रवर्त्तन किया और विभिन्न भाषाओंमें गोस्वामियोंके ग्रन्थादि प्रकाशन तथा हिन्दीमें 'श्रीश्रीभागवत–पत्रिका' और अंग्रेजीमें 'Rays of The Harmonist' पत्रिकादि प्रकाशित की। उत्तम–भागवतके चरित्र और गुणमें प्रतिष्ठित होनेके कारण वे अपने–परायेके भेद और भ्रमादिसे पूर्णतः मुक्त आश्रयस्वरूप थे। वे श्रीमती राधारानीके स्नेहभाजनके रूपमें 'हीनार्थाधिकसाधकोत्तम' अर्थात् अपनेको अत्यन्त दीन–हीन अनुभव करनेवाले उत्तम–साधकरूपी लीला–परायण एवं सभी प्रकारके कार्पण्यता(भय और कायरता), अब्राह्मण्यता(अब्राह्मणोचित), दौरात्म्यता (दुर्भावना), दौर्भाग्यता (दुर्भाग्य), दारिद्रताादि दोषोंसे रहित थे।

वैष्णवी प्रतिष्ठामें प्रतिष्ठित उनकी महिमा

वे अपने गुरुवर्गकी मर्यादा संरक्षणमें सिंहके समान पराक्रमशाली थे। वे 'शाब्दे परे च ब्रह्मण्युपसमाश्रयम्' (श्रीमद्भा॰ ११/३/२१) श्लोकके मूर्त्तिमान स्वरूप थे। ['शब्दब्रह्म' अर्थात् श्रुति–शास्त्र सिद्धान्तमें सुनिपुण और 'परब्रह्म' में निष्णात अर्थात् अधोक्षज अनुभूतिसे युक्त तथा प्राकृत किसी भी दुःखके वशीभूत नहीं होनेके कारण वे सद्गुरु थे।] उनकी कृष्णानुशीलनकी प्रवृत्ति विस्तृत और प्रचुर थी। उनकी महिमा सम्पूर्ण वैष्णवी प्रतिष्ठामें प्रतिष्ठित है। निकुञ्ज विलासमें 'रमण मञ्जरी' स्वरूपमें विनोद मञ्जरी और नयनमणि मञ्जरीके आनुगत्यमें उनका विलास हमें रागानुगभजनमें प्रबुद्ध (प्रेरित) करें—इस प्रार्थनाके साथ उनके श्रेयःप्रद श्रीचरणकमलोंमें प्रणति–पुष्पाञ्जलि निवेदन करता हूँ। शिक्षागुरु रूपमें पूज्यपाद महाराजको पाकर हम अपनेको धन्य मानते हैं। उनका अकृत्रिम स्नेहपूर्ण आशीर्वाद हमारा चिरस्मरणीय विषय है। वे नित्यकाल जय–ध्वनिके माध्यमसे श्रद्धालुजनोंके हृदयमें अपनी स्वरूपविलासी मूर्त्तिमें विजय प्राप्त करें। जय नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजकी जय!

[श्रीमद्भक्तिसर्वस्व गोविन्द महाराज नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिविलास तीर्थ गोस्वामी महाराजके दीक्षा शिष्य तथा नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजके संन्यास शिष्य हैं।]

पूज्यपाद आन्तरिक

श्रीकेशवजी गौड़ीय मठके सेवकोंने पूज्यपाद श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजकी व्यास–पूजापर प्रकाशित की जानेवाली स्मारिकाके लिए प्रबन्ध हेतु आग्रह किया था। यद्यपि मैं पूज्यपाद नारायण महाराजजीकी महिमाका गान करनेके विषयमें अयोग्य हूँ, तथापि इस विषयमें उद्यत हो रहा हूँ। आजसे लगभग चालीस वर्ष पूर्व श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ, सतीश मुखर्जी रोड, कोलकातामें मैंने प्रथम बार श्रील नारायण महाराजजीका दर्शन किया था। उस समय मेरे गुरु महाराज श्रीलभक्तिदयित माधव गोस्वामी महाराज वहाँ उपस्थित थे। श्रील गुरु महाराजने पूज्यपाद नारायण महाराजको हरिकथा बोलनेके लिए आदेश दिया था। उस समय पूज्यपाद महाराजने बंगला भाषामें अति सुमधुर और सिद्धान्त पूर्ण हरिकथाके द्वारा उपस्थित श्रोताओंको मन्त्र–मुग्ध कर दिया था। उपस्थित श्रोतागण परस्पर चर्चा कर रहे थे कि बंगला–भाषी नहीं होनेपर भी इन महाराजजीने बंगला भाषामें कितनी सुन्दर हरिकथा बोली। वास्तवमें हम सभी उनकी हरिकथासे मुग्ध थे।

जब कभी पूज्यपाद नारायण महाराज हमारे मठमें आते थे, तो वे अपने चिरस्मरणीय प्रभावको छोड़कर जाते थे। वे हमारे मठके लिए सदैव शुभचिन्तक रहे हैं। जब कभी कोई विपत्ति आती थी, तो उसी समय अपने सेवकोंको आदेश देकर वृन्दावन भेजकर समस्याका समाधान करनेमें सदैव सहयोग प्रदान करते थे। उदाहरण स्वरूप श्रीविनोदवाणी गौड़ीय मठकी चार दीवारी बनानेके समय पड़ोसियोंके द्वारा बाधा उत्पन्न हुई थी, विपक्षियोंने उस समय मठके एक सेवकको निर्वस्त्र कर दिया था। हमारे द्वारा सूचना देनेपर पूज्यपाद नारायण महाराजजीने स्थानीय दबंग व्यक्तिको भेजकर विरोधी पक्षको यह कहकर चेतावनी दी थी कि समस्त गौड़ीय मठोंके सेवक एक हैं। तुम यह मत सोचो कि विनोदवाणी गौड़ीय मठ अकेला है।

श्रीचैतन्य गौड़ीय मठ, गोकुलमें किसी जाति–विशेषके लोगोंने जमीनपर कब्जा करके वहाँ अम्बेडकरकी मूर्ति स्थापित कर दी थी, तब भी पूज्यपाद महाराजजीने श्रीपाद कुञ्जबिहारी ब्रह्मचारी आदि सेवकोंको भेजकर हमें साहस प्रदान किया था।

पूज्यपाद महाराजजीका एक विशिष्ट गुण था—समदर्शिता। एक बार श्रीविनोदवाणी गौड़ीय मठके विपक्षी दलके द्वारा उत्पीड़ित किए जानेपर मैं पूज्यपाद महाराजजीके पास श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें उपस्थित

महाराजजीके चरणोंमें पुष्पाञ्जली

श्रीमद्भक्तिविकास गोविन्द महाराज

हुआ। तब पूज्यपाद महाराजजी स्वयं रिक्शेमें बैठकर कचहरीके पेशकार श्रीसुनहरी लालजीके पास गये तथा उन्हें केसको सशक्तरूपसे आगे बढ़ानेके लिए कहा।

मैं पूज्यपाद महाराजजीके स्नेहमय व्यवहारका सदैव ऋणी रहूँगा।

हमारे गुरुवर्गके चले जानेके बाद हमने पूज्यपाद महाराजजीको आश्रयके रूपमें प्राप्त किया था। व्रज–सारस्वत–गौड़ीय–वैष्णव–संघके संरक्षक पदपर रहकर वे सबके प्रति अपनी कृपादृष्टिकी वर्षा कर रहे थे। पूज्यपाद महाराजने शास्त्रीय प्रमाणोंसे परिपूर्ण 'प्रबन्ध–पञ्चकम्' ग्रन्थ लिखकर अति साहसपूर्वक उन बाबाजी लोगोंके मुँहपर थप्पड़ मारा, जिन्होंने गौड़ीय–मठके लोगोंको परम्परा–रहित कहा तथा गौड़ीय मठके लोगों द्वारा संन्यास या गेरूआ वस्त्र पहननेका भी विरोध किया था।

पूज्यपाद नारायण महाराजजीने अपनी वृद्ध अवस्थाकी चिन्ता न करते हुए अनेकों बार पृथ्वीकी परिक्रमा कर विभिन्न अहिन्दू राष्ट्रोंमें विशुद्ध श्रीगौरवाणीका प्रचार किया है। आज हजारों विदेशी लोग अखाद्य वस्तुओंका भोजन त्यागकर भक्तके रूप व्रजमें अथवा अपने ही देशमें रहकर शुद्ध–साधन–भजन कर रहे हैं।

यह प्रबन्ध लिखते–लिखते अचानक पूज्यपाद महाराजजीके नित्यलीलामें प्रवेशका समाचार सुनकर मुझे एवं सभी मठ–वासियोंको गहरा आघात लगा।उनके अप्रकट होनेसे हम सब अपनेको आश्रय विहीन अनुभव कर रहे हैं। श्रीलप्रभुपादके गणोंके एक–एक करके गोलोक धाममें चले जानेके बाद हमने पूज्यपाद नारायण महाराजजीको आश्रयके रूपमें प्राप्त किया था। किन्तु अब भगवानने वह आश्रय भी हमसे छीन लिया है। ऐसे महान शुद्ध–वैष्णवोंका संग हमें सदैव प्राप्त होता रहे–श्रीमन्महाप्रभुसे हम यही प्रार्थना करते हैं। अब हम पूज्यपाद महाराजकी साक्षात् व्यासपूजासे सदाके लिए वञ्चित रहेंगे।

[श्रीमद्भक्तिविकास गोविन्द महाराज नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिदयित माधव गोस्वामी महाराजके शिष्य हैं तथा श्रीधाम वृन्दावन स्थित श्रीविनोदवाणी गौड़ीय मठके संरक्षक हैं। श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके साथ इनका अत्यन्त स्नेहपूर्ण सम्बन्ध था।]

आन्तरिक

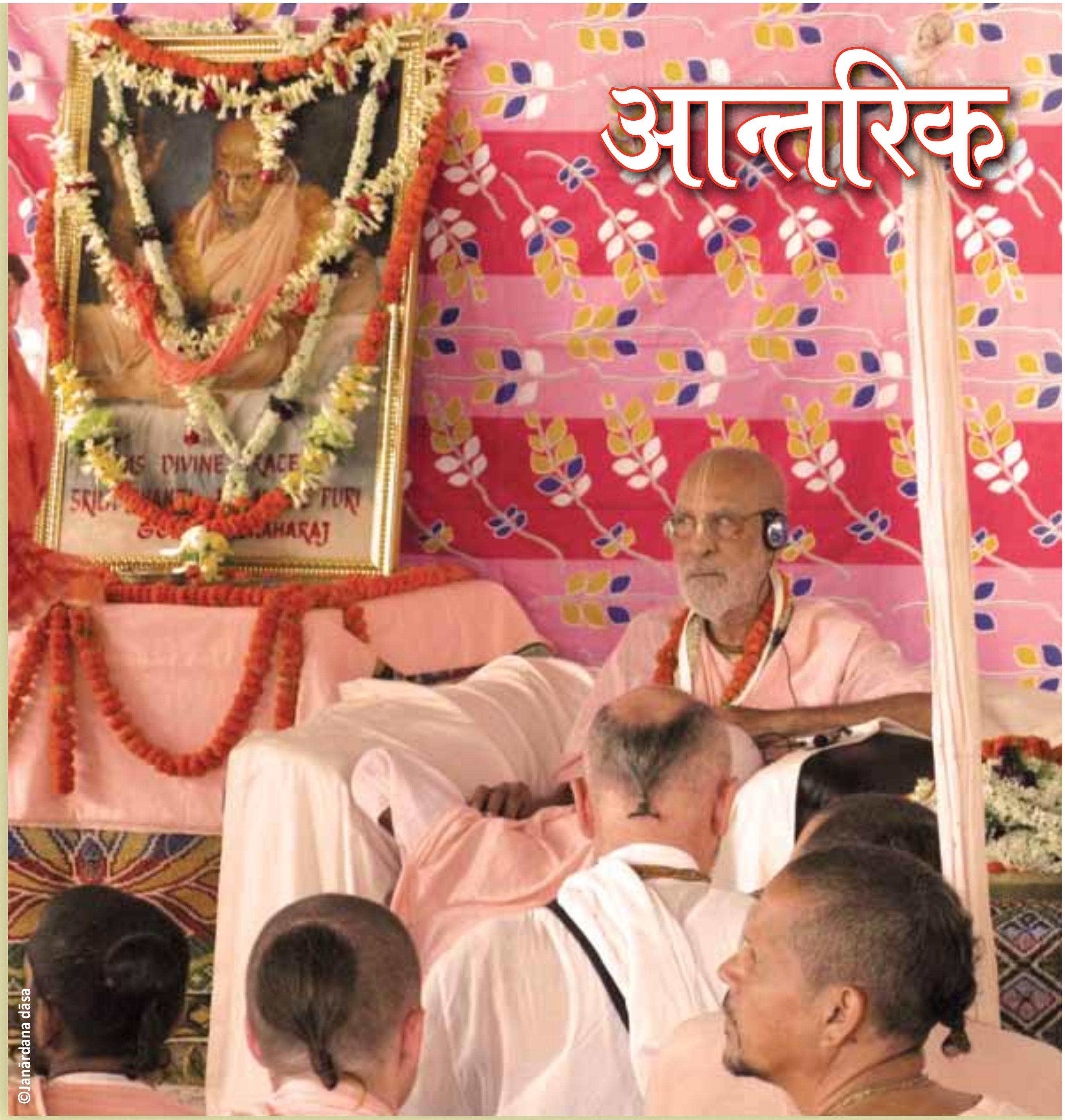

©Janārdana dāsa

प्रिय भक्तों और शुभ–चिन्तकों,

कृपया मेरे श्रील गुरुदेवका आशीर्वाद ग्रहण करें!

आजसे हम एक श्रेष्ठ वैष्णव श्रीलभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजके साक्षात् संगका आभाव अनुभव करेंगे, जिन्होंने बद्ध जीवोंके उद्धारके लिए अपनी वृद्ध अवस्थामें भी अथकरूपसे विश्वका भ्रमण किया।

जब भी मैं पूज्यपाद श्रील नारायण गोस्वामी महाराजजीके निकट मार्गदर्शनके लिए गया, श्रील महाराजजीने प्रसन्नतापूर्वक मेरे समस्त प्रश्नोंका उत्तर दिया। मेरे परमाराध्यतम गुरुदेव श्रील भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजने २२ नवम्बर १९९९ को नित्य–लीलामें प्रवेश किया था। उसके कुछ समय उपरान्त मैं नवद्वीप धाममें स्थित श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठमें मार्गदर्शन और उपदेश प्राप्त करने गया। उस समय श्रील महाराजजीने अपने मधुर–वचनों द्वारा मुझे सहनशील बननेका तथा मेरे गुरुदेव श्रील भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजके आनुगत्यमें

कृतज्ञता

श्रीमद्भक्तिविबुध बोधायन महाराज

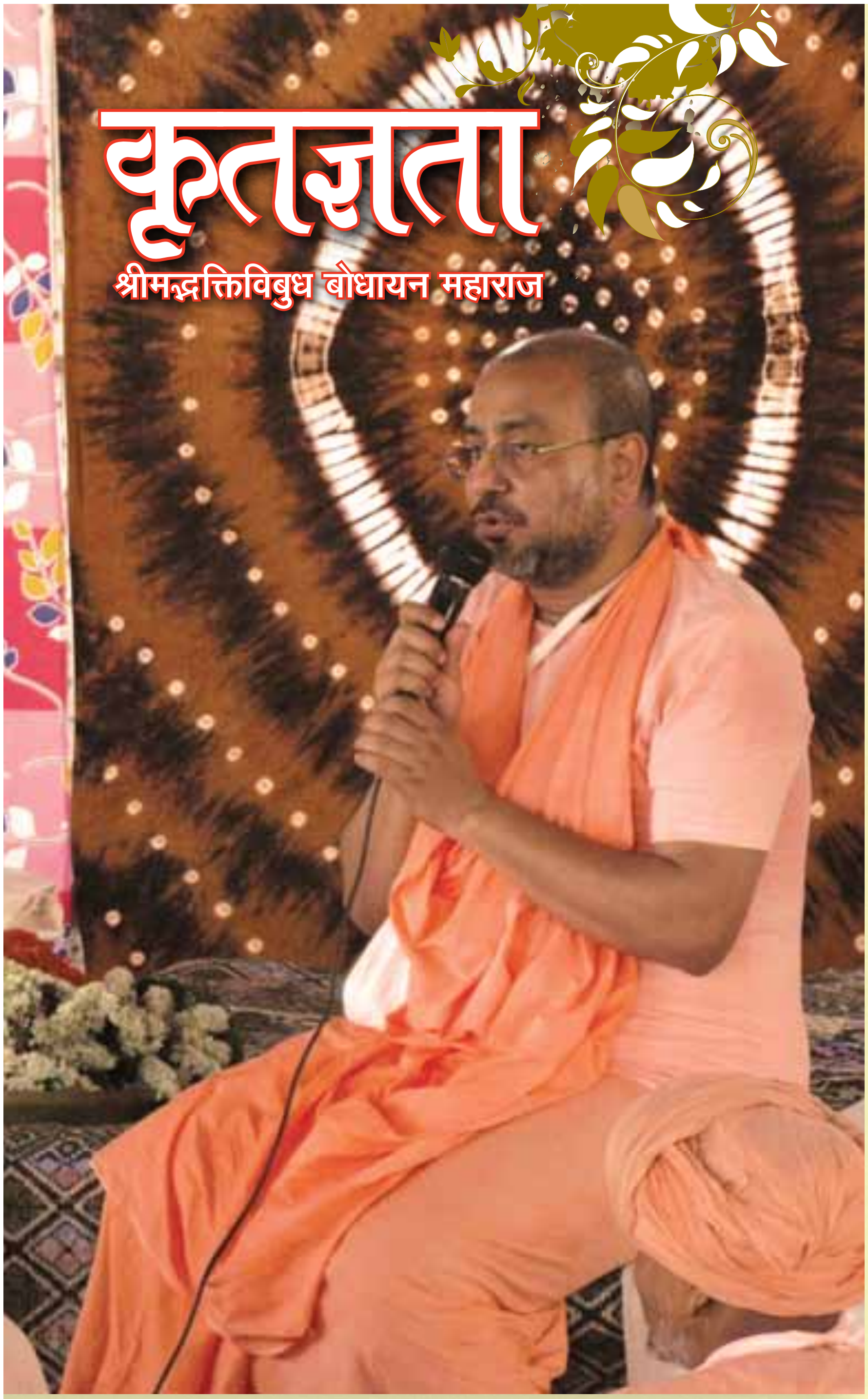

श्रीमन्महाप्रभुके मिशनको आगे बढ़ानेका उपदेश दिया। मैं आज तक पूज्यपाद महाराजके इस उपदेशका पालन कर रहा हूँ। इस उपदेशका पालन करनेसे मुझे वैष्णव समाजमें रहते हुए सहनशील होनेके लाभका अनुभव हो रहा है, जिसके फलस्वरूप मैं भक्तिमार्गका शान्तिपूर्वक अनुशीलन कर पा रहा हूँ।

यद्यपि २९ दिसम्बर, २०१० को श्रीजगन्नाथ पुरी–धाममें श्रील नारायण गोस्वामी महाराजने शारीरिक रूपसे इस मर्त्य जगत्को त्याग दिया, तथापि यदि हम उनके आनुगत्यमें जीवन यापन करते हैं, तो श्रील महाराजजी सदैव हमारे साथ ही हैं। हमें हरिकथाओंके माध्यमसे दिये गये उनके सन्देशका अवश्य ही आचरण करना चाहिये तथा उनके अमूल्य भक्तिग्रन्थोंका भी अनुशीलन करना चाहिये, तभी हम षड्गोस्वामियोंके उपदेशोंका यथार्थ अर्थ अवलोकन करने और समझनेमें सक्षम होकर मर्त्य जगत्के दुःखसे अपना उद्धार करनेकी योग्यता प्राप्त करेंगे। आजसे हमारे पास श्रील महाराजजीकी सेवाका एकमात्र सुयोग है—उनकी वाणीका पालन करना। वास्तवमें महापुरुषोंकी वाणी–सेवा ही हमें उन महापुरुषोंके निकट रखेगी।

मैं अति दीनतासहित श्रील नारायण गोस्वामी महाराजके चरणकमलोंमें यही प्रार्थना करता हूँ कि वे कृपापूर्वक मुझे अपनी वाणी–सेवामें नियुक्त होनेका बल प्रदान करें जिससे कि मैं अपने सम्पूर्ण जीवनको गुरु–परम्पराके आश्रयमें श्रीमन्महाप्रभुके मिशनका विशुद्ध रूपसे प्रचार करनेमें नियोजित कर सकूँ

निताई गौर–हरिबोल!!

शुद्ध–भक्तोंकी चरणधूलिके कणका अभिलाषी
स्वामी भ.वि.बोधायन
२९ दिसम्बर २०१०

[श्रीमद्भक्तिविबुध बोधायन महाराज नित्यलीला प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद्भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजके शिष्य हैं। वे अपने गुरुदेव द्वारा स्थापित श्रीगोपीनाथ गौड़ीय मठके वर्तमान आचार्य हैं। वे समग्र भारत और विश्वमें श्रीचैतन्य महाप्रभुके सन्देशका प्रचार करते हुए भ्रमण करते हैं।]

व्रजके विख्यात विद्वानोंकी पुष्पाञ्जली

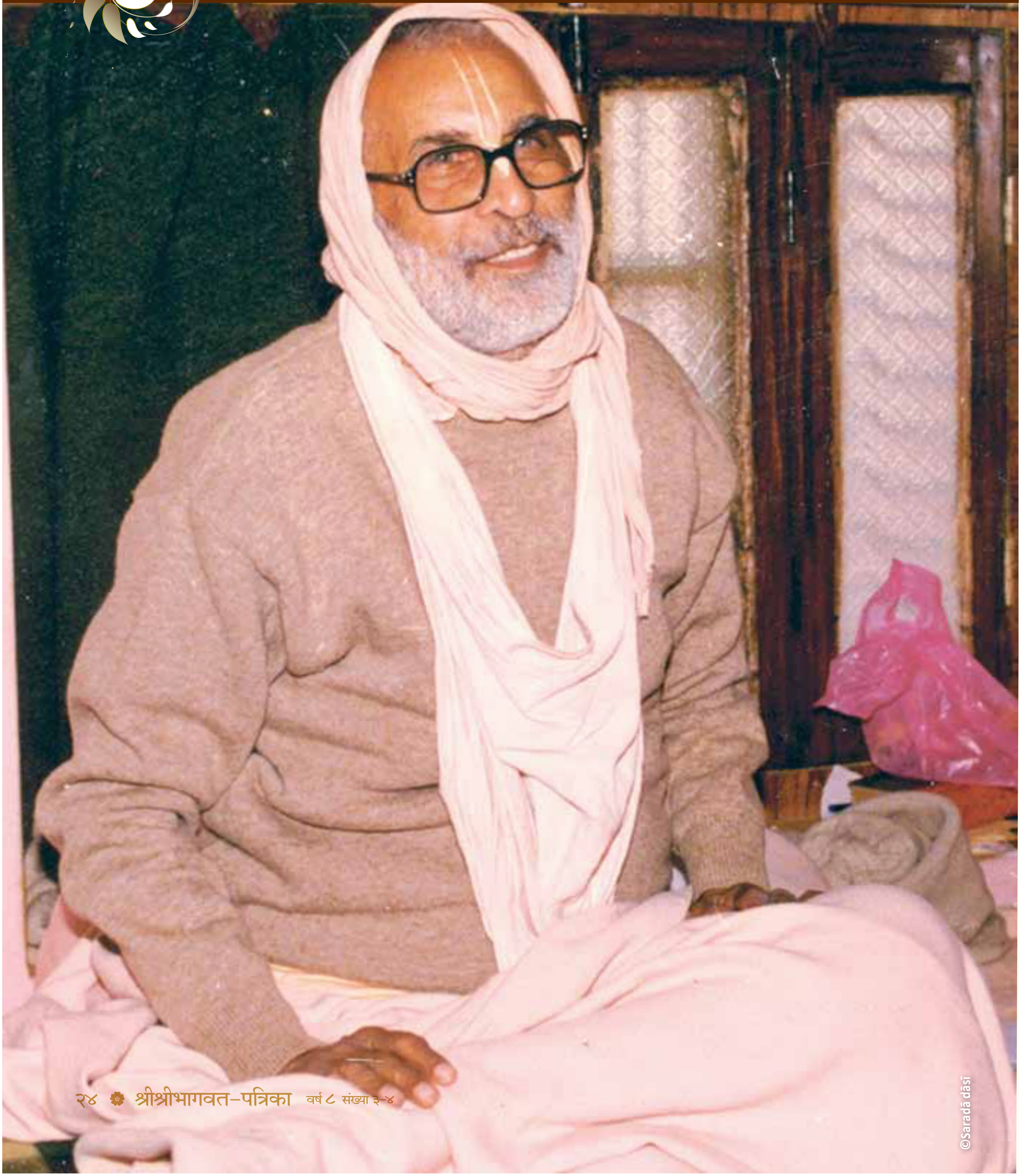

©Saradā dāsī

परहितकर्ता पूज्यश्री महाराजजीकी मेरे प्रति कृपा

डॉ. वासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी, डी.लिट्, सप्ताचार्य

के द्वारा १४ जनवरी २०११ को श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुरा धाममें आयोजित विरहसभा समारोहमें निवेदित वाचिक पुष्पाञ्जलि

परहितकारी पूज्य महाराजश्री

पूज्य त्रिदण्डीस्वामी अष्टोत्तरशतश्री श्रीभक्तिवेदान्त नारायण महाराजजीने जगत्को उन दुर्लभ विषयोंसे अवगत कराते हुए उनका दान दिया है, जो वर्तमान समयमें न तो कहीं सुननेको मिलते हैं और न ही किसीके द्वारा दान देते हुए दिखलायी पड़ते हैं। इसका कारण है कि पूज्य महाराजश्री केवलमात्र परोपदेशक (अर्थात् दूसरोंको केवल उपदेश देनेवाले) ही नहीं, अपितु परहितकर्ता (अर्थात् दूसरेके हितका कार्य करनेवाले) भी थे।

मेरे प्रति कृपा

महाराजश्री सबसमय दूसरोंका हित करनेमें व्यस्त रहते थे। विशेषतः पूज्य महाराजश्रीने मेरे लिए हितकार्य करके मेरे ऊपर जो कृपा की है, उसके लिए मैं महाराजश्रीके निकट चिर–कृतज्ञ हूँ। वे अनेक बार मुझे प्रोत्साहित किया करते थे। मैं इसे निम्नलिखित चार–पाँच उदाहरणोंके द्वारा स्पष्ट करना चाहता हूँ।

श्रीभागवत–पत्रिकामें सहकारी सम्पादक तथा संघपतिके रूपमें सेवा–भार प्रदान

मुझे पूज्य महाराजश्रीका प्रथम मंगल–आशीष वर्ष १९६४ ई॰ में प्राप्त हुआ, जब उन्होंने मुझे उस वर्षसे श्रीभागवत–पत्रिकाके सहकारी सम्पादक–संघमें सहकारी सम्पादकके रूपमें सेवा–भार अर्पित किया। परवर्तीकालमें उन्होंने मुझे उस संघके 'संघपति' के रूपमें भी नियुक्तकर मुझपर कृपा–वर्षण की। वे समय–समयपर मुझे श्रीभागवत–पत्रिकाके लिए लेख लिखने हेतु भी प्रेरित करते थे।

श्रीमद्भागवतकी पात्रानुक्रमणिका, स्थानानुक्रमणिका आदि प्रकाश करनेका आदेश

पूज्य महाराजश्रीने एकबार मुझसे कहा— "श्रीमद्भागवतपर पण्डितों द्वारा अनेक कार्य किया गया है, संस्कृतकी अनेक टीकाएँ की गयी हैं। किन्तु मैं चाहता हूँ कि आप श्रीमद्भागवतपर कोई ऐसा कार्य करें, जो जगत्में

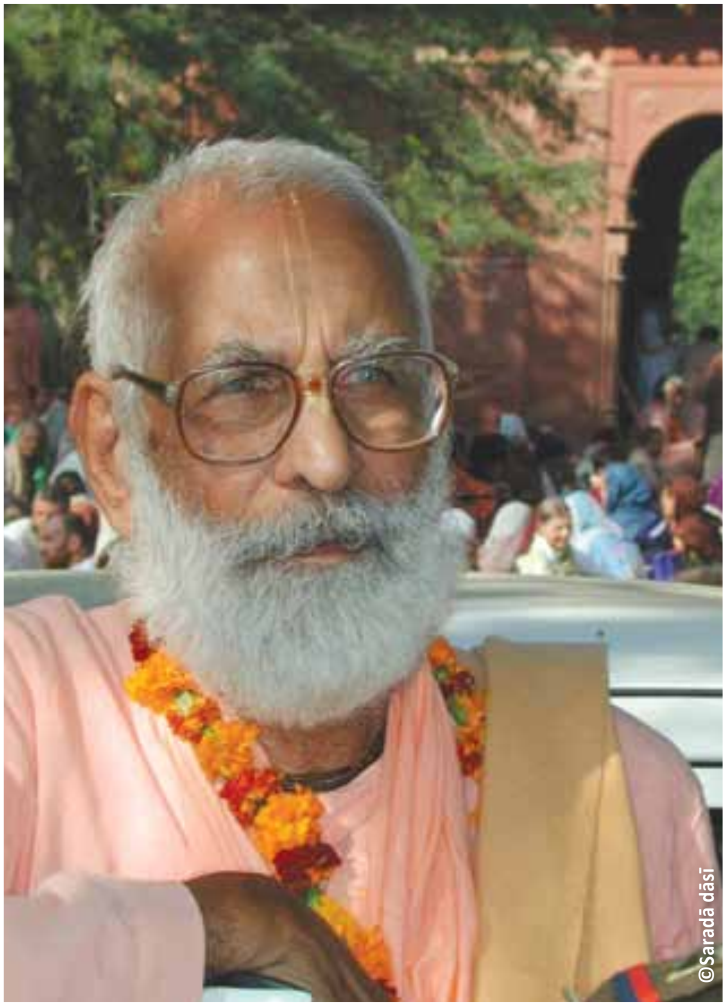

महाराजश्री सबसमय दूसरोंका हित करनेमें व्यस्त रहते थे।

अब तक किसीके द्वारा नहीं किया गया हो।" मैंने जब प्रश्न किया कि आप मुझसे क्या करवाना चाहते हैं। इसके उत्तरमें पूज्य महाराजश्रीने कहा—"मेरे इस प्रकार कहनेका तात्पर्य है कि यद्यपि हिन्दीमें श्रीमद्भागवतपर अनेक कार्य हुए हैं, किन्तु आजतक किसीने हिन्दीमें श्रीमद्भागवतकी पात्र, स्थान, नाम आदिकी अनुक्रमणिका (सूची) प्रस्तुत नहीं की है। इसीलिए यदि बड़े-से-बड़े पण्डितोंसे भी यह पूछा जाय कि श्रीमद्भागवतमें कितनी बार कृष्णका नाम वर्णित हुआ है, अथवा यमुना शब्दका प्रयोग कहाँ-कहाँ किया गया है, इत्यादि, तो वे भी इसका उत्तर नहीं दे पायेंगे। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप श्रीमद्भागवतके पात्र, स्थान आदिपर अनुक्रमणिका तैयार करें।"

इस प्रकारकी अनुक्रमणिका तैयार करना कोई साधारण बात तो नहीं थी, क्योंकि इससे पहले आज तक हिन्दी भाषामें ऐसा कोई कार्य नहीं हुआ था तथा यद्यपि श्रील प्रभुपाद भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुरके द्वारा प्रकाशित श्रीमद्भागवतमें इन सब विषयोंकी अनुक्रमणिका उपलब्ध थी, तथापि वह प्रत्येक स्कन्धपर थी, न कि एक साथ सम्पूर्ण भागवतपर और साथ ही वह बंगला लिपिमें ही प्राप्त थी। इसीलिए मैंने समझा कि यह कार्य मेरे द्वारा होना सम्भव ही नहीं है। परन्तु श्रील महाराजश्रीकी कृपा मुझपर हुई और मैं उनके आदेशको पूर्ण करनेमें सफल रहा।

पूज्य महाराजश्रीने इस कार्यको स्वयं नहीं करके मुझ जैसे साधारण व्यक्तिमें कृपा-सञ्चार करके करवा लिया और इसका सम्पूर्ण श्रेय मुझे देते हुए अपनी अपूर्व उदारताका परिचय दिया। उन्होंने इस अनुक्रमणिकाको मेरे नामसे श्रीश्रीभागवत-पत्रिका (वर्ष-१२, संख्या-८ और वर्ष-१३, संख्या-२-४) में संक्षेपमें प्रकाशित किया। इस प्रकार उन्होंने इस ग्रन्थका प्रचार सम्पूर्ण विश्वमें किया था।

इस ग्रन्थकी विशेषता यही है कि इसके द्वारा 'कृष्ण' इत्यादि शब्द कितनी बार श्रीमद्भागवतमें आये हैं, इसे जाना जा सकता है।

श्रीमद्भागवतके प्रत्येक श्लोकका उपनिषद् और ब्रह्मसूत्रके साथ सम्बन्ध

ब्रह्मसूत्र, उपनिषद्, श्रीमद्भागवतादिके श्लोकोंको पृथक्–पृथक् रूपसे कहना सबके लिए सहज है, किन्तु श्रीमद्भागवतके प्रकाण्ड विद्वान भी यह नहीं बतला सकेंगे कि ब्रह्मसूत्रके प्रत्येक सूत्रका श्रीमद्भागवतके किन–किन श्लोकोंके साथ सम्बन्ध है। उसी प्रकार श्रीमद्भागवतके किन–किन श्लोकोंपर उपनिषद् मन्त्रोंका प्रयोग है—यह कहना भी किसी पण्डितके बसकी बात नहीं है। मैं यह मानता हूँ कि कुछेक सूत्र या उपनिषद् मन्त्रोंका सम्बन्ध श्रीमद्भागवतके श्लोकोंके साथ किया जा सकता है, परन्तु समस्त सूत्रों तथा मन्त्रोंका सम्बन्ध श्रीमद्भागवतके अट्ठारह हजार श्लोकोंके साथ करना प्रत्येकके लिए सम्भव नहीं है। किन्तु, पूज्य महाराजश्रीकी कृपा और उनकी प्रेरणासे ही मैंने यह कार्य सम्पन्न किया और यही विषय मेरे डी.लिट् के लिए स्वीकार भी किया गया।

संस्कृतकी महिमाका पुनः स्थापन

विदेशी भाषज्ञों (भाषाको जाननेवालों) ने comparative philology or linguistics में विश्वकी विभिन्न भाषाओंकी तारतम्यमूलक विवेचना करते हुए संस्कृतको सातवाँ स्थान दिया था। संस्कृतसे पहले African, American, Semitic आदि को महत्त्व दिया गया था। श्रील महाराजजीने इस विषयपर दुःख प्रकाश करते हुए मुझसे कहा—"यह अत्यन्त दुःखकी बात है कि विश्वकी समस्त भाषाओंकी मूल भाषा संस्कृतको नीचे दिखलानेके उद्देश्यसे इन विदेशी लोगोंने उसे सातवें स्थानपर रख दिया है। आप इसका अवश्य ही प्रतिवाद करें। जब तक वे संस्कृतकी श्रेष्ठताको स्वीकार नहीं करते, तबतक आप प्रतिवाद करते रहिए। इस प्रकारकी भ्रान्त शिक्षाको दूर करनेकी आवश्यकता है, क्योंकि संस्कृत भाषा विश्वकी समस्त भाषाओंकी मातृभाषा है।"

पूज्य महाराजश्री द्वारा दी गयी प्रेरणासे मैंने भी इसका प्रतिवाद देशी–विदेशी लोगोंकी उपस्थितिमें comparitive philology के सम्मेलनमें किया, जिसमें मेरे मित्र तथा भारतके पूर्व राष्ट्रपति श्रीशंकरदयाल शर्मा भी उपस्थित थे। श्रील महाराजश्रीकी बातोंको कहते हुए मैंने उन सबको यह बतलाया कि संस्कृत विश्वकी समस्त भाषाओंकी मातृभाषा या मूलभाषा है। विश्वकी समस्त भाषाएँ संस्कृतसे ही निकली हैं, अतः सभी प्रकारसे संस्कृतकी सर्वोच्चता स्वतःसिद्ध होती है। हमने कभी भी किसी भाषा या किसी जातिको निम्न नहीं दिखलाया है, फिर भी आप विदेशी लोग हर समय भारतकी जाति, संस्कार और भाषाओंको नीचा दिखलानेमें जुटे हुए हैं। यहाँ तक कि बात–बातपर संस्कृतपर ठोकर मारते हैं। इसका भारतके पूर्व राष्ट्रपति श्रीशंकरदयाल शर्माने भी समर्थन किया। उस सम्मेलनमें उपस्थित सभी इस प्रतिवादको स्वीकार करनेके लिए बाध्य हुए तथा उनलोगोंने आश्वासन दिया कि हम अबसे संस्कृतको सर्वोच्च भाषाके रूपमें स्वीकार करेंगे।

श्रीमहाराजश्रीके आशीर्वादसे ही यह कार्य सम्पन्न हुआ।

उनकी कृपाका फल

पूज्य महाराजश्रीकी कृपासे ही मेरा श्रद्धेय श्रीमद्भक्तिहृदय वन महाराजजीके साथ साक्षात्कार हुआ और मुझसे प्रभावित (अर्थात् मेरे भाषण और पाण्डित्यसे प्रभावित) होकर उन्होंने मुझे अपने कालेज़में संस्कृतके Head of the department के रूपमें नियुक्त किया। इस प्रकार मैंने वहाँ तीस वर्ष तक सेवाभार निभाते हुए लगभग ५० Phd करवायी और प्रायः साठ ग्रन्थ छपवानेमें योगदान दिया है। जीवनमें इन सफलताओंका आरम्भ मथुराके श्रीकेशवजी गौड़ीय मठसे हुआ, जहाँसे मुझे पूज्य महाराजश्रीकी प्रेरणा और आशीर्वाद सब समय प्राप्त होता रहा। इस प्रकार श्रील महाराजश्रीने मुझपर कृपा करते हुए मुझे जीवन पथमें अग्रसर किया था।

श्रीमद्भागवतके प्रेमी पूज्यपाद महाराजजी

श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीने अपने प्रवचनोंमें श्रीमद्भागवतजीके अनेक सार प्रकट किये हैं, जिन्हें संकलनकर एक पृथक् ग्रन्थ बनाया जा सकता

है। पूज्य महाराजश्री श्रीमद्भागवत पुराणके परम प्रेमी थे। वे सर्वदा इस श्लोकको अवश्य कहा करते—

आराध्यो भगवान् ब्रजेशतनयस्तद्धाम वृन्दावनं
रम्या काचिदुपासना ब्रजवधूवर्गेण या कल्पिता।
श्रीमद्भागवतं प्रमाणममलं प्रेमा पुमर्थो महान्
श्रीचैतन्यमहाप्रभोर्मतमिदं तत्रादरो नः परः॥

(श्रीलविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर)

अर्थात् भगवान् व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण एवं उनके ही समान वैभवयुक्त उनका श्रीधाम वृन्दावन हमारी परम आराध्य वस्तु हैं। व्रज वधुओंने जिस भावसे श्रीकृष्णकी उपासना की है, वह उपासना ही सर्वोत्कृष्ट है। श्रीमद्भागवत ग्रन्थ ही निर्मल शब्द प्रमाण एवं प्रेम ही परम पुरुषार्थ है—यही श्रीचैतन्य महाप्रभुका मत है। यह सिद्धान्त ही हम लोगोंके लिए परम आदरणीय है, अन्य कोई मत आदर योग्य नहीं है।

दूसरोंको सम्मान प्रदान करनेका स्वभाव

पूज्य महाराजश्री मथुरामें विभिन्न अवसरोंपर विद्वानोंका सम्मान करते हुए उनसे शास्त्रोंका मत सुननेके लिए विद्वत् सभा या संगोष्ठीका आयोजन करते थे। मैंने कभी उनको किसीका अनादर करते नहीं देखा और न ही उनमें अपनी प्रशंसा सुननेकी लेशमात्र भी लालसा थी। किसीकी निन्दा न करना और गुणवान्के गुणोंको जाग्रत कर उनकी प्रशंसा करना—यही उनका स्वभाव एवं विशेषता थी। श्रीलनारायण महाराजजी प्रारम्भसे ही सबसे मिलन–सार (सारग्राही) थे।

पूज्य महाराजश्री द्वारा आयोजित विद्वत सभाएँ बहुत रोचक हुआ करती थी, क्योंकि महाराजश्री विद्वानों और श्रोताओंको पहले अनेक प्रश्न करके उनके विचारोंको सुनते और अन्तमें सबके विचारोंका शास्त्रानुरूप तथा श्रीचैतन्यमहाप्रभुके मतानुरूप सामञ्जस्य करते हुए श्रोताओं तथा पण्डितोंपर अमृतकी वर्षा किया करते।

महाराजश्री प्रत्येक धार्मिक सभामें मुझे बुलाते थे। विशेषतः श्रीवृन्दावन धाममें प्रत्येक वर्ष श्रीलरूप गोस्वामीकी तिरोभाव तिथि महोत्सवमें आयोजित विद्वत् गोष्ठीमें सम्मान देते हुए मुझे अध्यक्षपदपर बिठाकर वे सामान्य श्रोताके रूपमें विराजित हुआ करते।

महाराजजीके दिव्य गुणोंकी प्रशंसा

श्रील नारायण महाराजजीको भगवन्नाम लेनेवाले, उनके द्वारा रचित शास्त्र–ग्रन्थोंका पाठ करनेवाले और उनकी विचार प्रणालीको समझनेवाले प्रायः कोई भी भूल नहीं सकेंगे। मैं उनके पाण्डित्य, शास्त्रज्ञान, भक्तिभावना, रसवेत्तता (रस विचारसे अवगत होने) की जितनी प्रशंसा करूँ, कम ही होगा।

'नारायण' शब्दका तात्पर्य

'नारायण' शब्दका तात्पर्य है—'नार' अर्थात् जल या रस और 'अयण' अर्थात् स्थान। इसलिए 'नार+अयण=नारायण' नाम का अर्थ है जो रसके निवास स्थान या आधार हैं। पूज्य महाराजश्री इसके साक्षात् मूर्त्तिमान विग्रह हैं। उनके द्वारा प्रवाहित रसकी धारा और प्रेमको किन्हीं प्राकृत शब्दोंके द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता है। जिस प्रेमकी बाढ़को उन्होंने उदारतापूर्वक बहाया है, वह उनकी अपनी प्रेमकी रसाप्लावित भावनाकी धारा ही है।

अत्यन्त दुःखका विषय है कि ऐसे महान पुरुष आज हमारे बीच नहीं हैं।

ऐसे महापुरुषके चरणोंमें मैं अनेक बार नमन करता हूँ।

जय राधे!

[श्रीवासुदेवकृष्ण चतुर्वेदी पी.एच.डी., डी.लिट्, साहित्यरत्न व्रजके प्रख्यात विद्वान, यू.पी रत्न, विजय रत्न, शुद्धाद्वैत रत्न, निम्बार्करत्न आदि उपाधियोंसे विभूषित और सप्ताचार्य हैं। ये 'श्रीश्रीभागवत–पत्रिका' में सहकारी सम्पादक संघके संघपतिके रूपमें गत ४६ वर्षोंसे अपनी अभूतपूर्व सेवाएँ अर्पित कर रहे हैं।]

महान युगपुरुष तथा वर्तमान आचार्योंमें अग्रगणीय— श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

डॉ. गोस्वामी अच्युत लाल भट्ट

भारत तथा विश्वमें अतीतकी विचार प्रणालियोंकी अवस्था

विश्वके अन्य देशोंमें जहाँ वर्तमानके विचारों एवं अतीतके विचारोंमें हुए द्वन्द्वमें वर्तमानके विचार समूह प्रभावशाली रहे हैं और अतीतके विचार समूह निष्क्रिय और निरर्थक हो गये हैं, वहीं भारतवर्षमें अतीतके विचार समूह आज भी उपयोगी होकर सार्थक बने हुए हैं, प्रेरणा स्वरूप बने हुए हैं तथा वर्तमानके साथ संघर्ष करते हुए सफल होकर विराजित हैं।

तीन आधुनिक विचार धाराएँ और विश्वरभरमें उनका प्रभाव

चिरकालीन विचार प्रणालियोंको अस्वीकारकर स्वार्थपोषक और वर्तमान केन्द्रित विचार प्रणालियोंको प्रधानता देनेवाली तीन आधुनिक विचार धाराओंका वर्तमान जगत्‌की जीवन–पद्धतिको स्थापित करनेमें प्रमुख योगदान रहा है—(१) डारविनका 'विकासवाद' [Theory of evolution] जिसने मत्स्य सिद्धान्त अर्थात् "survival of the fittest" को जीवन दर्शन बना दिया और उसका परिणाम हुआ—प्रतिस्पर्धा, हिंसा तथा आतंक आदि। (२) कार्ल मार्क्सका 'साम्यवाद' [Communism] जिसका आधार था उत्पादनके साधनोंपर 'सर्वहारा' (उत्पादन करनेवाले वर्ग) का अधिनायकत्व। इस विचार प्रणालीका परिणाम हुआ— द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद एवं वर्ग–संघर्ष। इसके फलस्वरूप अहिंसा, त्याग, दया तथा बन्धुत्व आदि गुण समूह एवं वर्णाश्रम व्यवस्था जैसी सर्वांग सुन्दर व्यवस्थाको निरर्थक बनानेका प्रयास हुआ तथा (३) फ्रायड़का 'स्वप्न–सिद्धान्त' [Psycho-analysis and theory of dreams] जिसमें वासनाओंको शम, दम और सहनशीलतासे जीतनेके स्थानपर उनकी उन्नतिको प्रोत्साहित किया गया। इसके प्रचारका यह परिणाम हुआ कि विश्वमें सर्वत्र उन्मुक्त उच्छृंखल–भोगवाद दावानलकी तरह फैल गया।

आधुनिक भौतिक–विज्ञानकी उन्नति एवं सूचना तकनीकने "वर्त्तमान केन्द्रित" जीवन पद्धतिको अधिकांश लोगोंके शैय्याघर (bedroom) तक पहुँचा दिया है। इन्हीं

तीन विचार–धाराओंसे अनुप्राणित होकर ही विश्वके अनेक देशोंमें एक–दूसरेसे श्रेष्ठ और शक्तिशाली बनने तथा अन्योंको परतन्त्र बनानेकी होड़ लगी हुई है।

भगवद्गीताके समक्ष आधुनिक विचार प्रणालियाँ प्रभावहीन

यद्यपि भारत इस प्रवाह एवं प्रभावसे बच तो नहीं सकता, तथापि उसके पास भगवद्गीता जैसा शास्त्र हैं, जिसकी विचार–प्रणालीके समक्ष अन्यान्य सभी आधुनिक विचार प्रणालियाँ सम्पूर्णरूपसे प्रभावहीन हैं। इसलिए भारतमें 'अतीत–काल' की विचार प्रणाली अभी भी उपयोगी होकर जीवित अवस्थामें विराजमान है।

महाराजश्रीका महत्त्वपूर्ण योगदान

अतीतकी विचार–प्रणालीको सञ्जीवित रखनेमें वर्तमान कालमें जिन मनीषियोंकी प्रमुख सेवाएँ रहीं हैं, उनमें श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीका विशेष योगदान रहा है।

भगवद्गीताकी अमूल्य विचार–धारा

हमारे इस विनाशशील जीवनके द्वारा शाश्वत उपलब्धिको प्राप्त करनेके लिए भगवद्गीताने कुछ अमूल्य विचारधाराएँ दीं हैं। जैसे–निष्काम–कर्मयोग; कर्तृत्व–बुद्धिका त्याग; ज्ञानयोग; आत्म–स्वरूपका विचार अर्थात् मैं यह देह नहीं हूँ और न ही यह देह मेरा है; भक्तियोग; जीव प्रभुका विभिन्नांश है, एवं उन्हींकी अपरा (तटस्था) शक्तिसे प्रकाशित है, इत्यादि। विनाशधर्मी देह एवं परिणामशाली प्रकृतिकी उपयोगिता तभी है, जब चेतन (अर्थात् जीव) उन्हें भगवत्–सेवाकार्यके लिए उपकरण स्वरूप बनाकर भगवत् सेवा–सुख प्राप्त करनेका प्रयास करें। जीवके लिए भगवत् सेवा–सुखका एकमात्र साधन कर्म–ज्ञान–भक्तिमें साधन बुद्धिका त्यागकर 'शरणागति' ही है तथा शरणागतिकी सार्थकता 'प्रेममयी सेवा' में है।

भगवत्–सेवासुखकी पराकाष्ठा

भगवत्–सेवासुखका आधार एवं सर्वोत्तम स्वरूप 'राग या लौकिक–सद्बन्धुवत् भाव' में है, जिसकी पराकाष्ठा वृषभानुनन्दिनी श्रीमती राधाजीका 'मादनाख्य–महाभाव' है। यह 'मादनाख्य–महाभाव' एकमात्र श्रीराधारानीमें ही प्रकाशित है। मञ्जरी–भावके द्वारा ही साधक इसका आस्वादन प्राप्त कर सकता है।

श्रीमन्महाप्रभुकी महावदान्यता

प्रेमावतार, श्रीराधा और श्रीकृष्णके मिलित तनु, श्रीराधारानीके भाव और कान्तिसे सुवलित (युक्त) श्रीगौराङ्गदेवने 'अनर्पितचरी श्रीः' अथवा 'मञ्जरीभाव' साधकोंको प्रदान किया। जिस भक्ति 'श्रीः' को श्रीकृष्णचन्द्र बड़े विचारके बाद भी साधकको नहीं देते, केवल शुद्धभक्ति मात्र ही देते हैं तथा जिसे श्रीराधारानी भी केवल अपने परिकरोंको ही दिया करती हैं, श्रीगौरहरिने उसी 'मञ्जरीभाव' की अधिकाररूपी सम्पत्ति सम्पूर्ण-जगत्को प्रदान की। इस मञ्जरीभावको प्राप्त करनेके लिए योग्यता है, भक्तिके लिये 'लोभी' होना। 'श्रीरूपानुग-उपासना' पद्धतिके द्वारा 'जातलोभ' (अप्राकृत लोभको प्राप्त कर चुका) व्यक्ति प्रधानतः 'हरिनाम' साधनके द्वारा इस मञ्जरीभावको प्राप्त कर सकता है।

आचार्योंमें अग्रगण्य-महाराजश्री

श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने ऐसे अप्राकृत 'लोभ' को सुदूर देश-विदेशके साधकोंमें उत्पन्न कराकर उनका मार्ग निर्देशन किया। अतः वे ऐसी परमदुर्लभ कृपाको प्राप्त करानेवाले आचार्योंमें अग्रगण्य थे।

सन्तोंके माध्यमसे ही जगत्के जीवोंका कल्याण

सन्त एवं विद्वान-कलाकार देशकी संस्कृतिके दो नेत्र होते हैं। इनमें सन्तगण भक्ति द्वारा स्वयं तो भवसागर पार करते ही हैं, वे भक्ति-सम्प्रदायरूपी नावको इस जगतमें ही छोड़ जाते हैं, जिससे भावी पीढ़ियाँ भी उद्धार प्राप्त करती रहती हैं। श्रीभगवान् सदनुग्रह (शुभ-चिन्ता) से युक्त हैं, वे सन्तोंके माध्यमसे ही जगत्का प्रायः कल्याण करते हैं।

श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने श्रीमन्महाप्रभु द्वारा प्रकाशित एवं श्रीलरूप गोस्वामी द्वारा स्थापित उपासनाके जिस सम्प्रदायको सुविकसित किया, उससे अनेक पीढ़ियाँ लाभान्वित होंगी।

महाराजश्रीसे सम्बन्धित वैष्णव समूहकी विशेषता

श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजकी एक उल्लेखनीय विशेषता यह रही है कि उनसे सम्बन्धित वैष्णव समूह भी एक प्रबुद्ध (अर्थात् परमार्थ विषयमें जाग्रत, विवेकवान) एवं उपासनार्थ समर्पित वर्ग है। श्रद्धा, विश्वास एवं साधनाके प्रति प्रतिबद्धता उसमें कूट-कूटकर भरी हुई है। किन्तु इसे उसकी अन्ध-भावुकता नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उस वैष्णव समूहकी साधनाके प्रति प्रतिबद्धता श्रीमन्महाप्रभु एवं श्रीरूप-सनातन द्वारा सुस्थापित दृढ़मंचपर विराजित तथा तर्क एवं विचारकी शृंखलासे सुस्थिर है।

विश्वको सर्वाधिक प्रभावित करनेवाले आचार्य

तार्किक एवं स्वार्थपोषक पश्चिमदेशवासी भी महाराजश्रीके अनुगत हुए। श्रीभक्तिवेदान्त स्वामी महाराजके बाद सम्पूर्ण विश्वमें श्रीमन्महाप्रभुके सिद्धान्तोंका सर्वाधिक

श्रील रूप गोस्वामी

श्रील सनातन गोस्वामी

प्रचार करनेवाले एवं विश्वको सर्वाधिक प्रभावित करनेवाले आचार्योंमें श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज मुख्य हैं। अपने प्रभावसे वे सम्पूर्ण विश्वमें छा गये।

प्रचारका वैशिष्ट्य

धर्मके क्षेत्रमें प्रचारकोंकी भीड़से हमने श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीको कुछ अलग देखा है। जहाँ दूसरे लोग धन एवं जन एकत्रित करनेकी होड़में जुटे हैं, वहाँ पूज्यपाद महाराजने गौड़ीय–सम्प्रदायके आधारभूत मूल–उपयोगी ग्रन्थोंका प्रकाशनकर जगत्‌में स्थायीकार्य किया।

उन्होंने अनेक महत्त्वाकांक्षी प्रकाशन योजनाओंके द्वारा श्रीबृहद्भागवतामृतम्, श्रीमद्भागवतीय रासपंचाध्यायी तथा श्रीउज्ज्वलनीलमणि आदि ग्रन्थोंका टीकाओं सहित प्रकाशन एवं श्रीमद्भागवतके श्लोकोंका अनुवाद तथा अनेकानेक अन्य साम्प्रदायिक ग्रन्थोंके प्रकाशनके साथ–साथ श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुरके द्वारा रचित चमत्कार–चन्द्रिका आदि सुदुर्गम अनेक छोटे आकारके उपयोगी ग्रन्थोंको भी प्रकाशित किया। ये प्रकाशन अपने स्तर एवं स्वरूप दोनों ही दृष्टिकोणोंसे अति उत्कृष्ट एवं आकर्षक हैं। 'गौड़ीय वेदान्त प्रकाशन' जैसी संस्था ऐसे महान् कार्य करनेके लिए बधाई एवं अभिनन्दनकी पात्र है।

एक महान युगपुरुष

श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज एक महान् 'युगपुरुष' थे। 'युगपुरुष' वह होता है जो समाजको सब कोणोंसे छूता है एवं उसके [भगवत्–प्राप्तिके] मार्गको प्रकाशित कर उसे जीवनके परमलक्ष्य तक पहुँचाता है। उस 'युगपुरुष' में 'सारग्राही–समन्वय' की प्रवृत्ति होती है।

सार संग्रहकी दो पद्धतियाँ

सार संग्रहकी दो पद्धतियाँ हैं—चींटीका संग्रहण एवं मधुमक्खीका संग्रहण। दोनों ही हेयका त्यागकर उपादेयको ग्रहण करते हैं। परन्तु चींटीके संग्रहणमें भेद–दृष्टि (discrimination) है, जबकि मधुमक्खीके संग्रहणमें अभेद–दृष्टि (non-discrimination) है।

शास्त्र–विचारोंके संग्रहणमें भेद दृष्टि

श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजने शास्त्रीय विचारोंके संग्रहणमें चींटीकी संग्रहण दृष्टि अर्थात् भेद–दृष्टिको अपनाया। श्रीलरूप गोस्वामीने श्रीमन्महाप्रभुके आदेशसे सुमेरु (पर्वत)रूपी शास्त्रोंसे जिन सार सिद्धान्तोंका संकलन किया था एवं श्रीमन् महाप्रभु द्वारा प्रवर्तित जिस रागमार्गीय उपासना पद्धतिका एक आदर्श प्रस्तुत किया था, वही श्रीरूपानुग–उपासना– पद्धति श्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजमें फलीभूत हुई थी, अर्थात् महाराजश्री उसके मूर्तिमान स्वरूप थे। अनेकानेक शास्त्र तथा उपासना पद्धतियोंके रहनेपर भी उन्होंने शास्त्र–विचारोंके संग्रहणमें भेद–दृष्टि अपनाते हुए एकमात्र श्रीरूपानुग आचार्योंके सिद्धान्तोंको ही अपने जीवनका सार–सर्वस्व बनाया।

कृपा करनेमें अभेद दृष्टि

कृपा करनेमें पूज्य महाराजश्री मधुमक्खीके समान रहे अर्थात् जिस प्रकार मधुमक्खी बिना किसी भेदभावके सभी प्रकारके पुष्पोंसे मधुका संग्रह करती है, उसी प्रकार महाराजश्रीने भी बिना किसी भेदभावके सभीके हृदयमें विद्यमान सेवा–वृत्तिको संग्रह करके उसे सम्पूर्णरूपमें भगवद्–सेवामें लगाया तथा इस प्रकार भेद रहित होकर सबपर कृपाका वर्षण किया। देश–विदेशमें जो भी व्यक्ति उनके प्रति आकर्षित हुए थे, वे सब उनके द्वारा ऐसे प्रभावित हो गये अर्थात् उनपर ऐसा कृपा वर्षण हुआ कि वे सदाके लिए उनके चरणोंमें प्रणत एवं समर्पित हो गये। श्रीमन्महाप्रभुकी भाँति पूज्य महाराजश्रीने भी सभीको भक्तिके मार्गमें आरूढ़कर प्रेम दान दिया।

इस प्रकार उनमें सिद्धान्तोंकी पवित्रता एवं कृपा करनेमें उदारता दोनों ही विद्यमान थी।

पूज्य महाराजश्रीसे परिचय, निकटता और उनकी कृपाकी प्राप्ति

भक्ति–सिद्धान्तोंके जिज्ञासु एवं अनुसंधान करनेवाले मेरे जैसे अनेक लोगोंको पूज्य महाराजश्रीने पहचाना एवं अपने साथ जोड़ लिया। मेरे साथ उनका परिचय एवं मुझे उनकी कृपाकी प्राप्ति–शुद्ध सैद्धान्तिक एवं औपासनिक मंचपर ही हुई। श्रील रूप गोस्वामिपादकी तिरोधान तिथि समाराधन (आराधना)के अवसरपर श्रीरूप–सनातन गौड़ीय मठ, वृन्दावनमें सम्भवतः सन् २००० में मुझे उनकी निकटता प्राप्त हुई। फिर तो हम ऐसे जुड़े कि उनकी कृपा एवं प्रीति बढ़ती ही गई। लौकिक एवं पारमार्थिक दृष्टिसे उन्होंने हमें यथोचित आदर दिया एवं अपना बनाकर रखा।

अनेक सेवा–योजनाओंमें मैं उनके साथ जुड़ा रहा। श्रीउज्जवलनीलमणि इत्यादिकी टीकाओंके अनुवादमें मुझे सेवा करनेका सौभाग्य भी प्राप्त हुआ। विभिन्न आयोजनों, जैसे–श्रीकृष्ण–जन्माष्टमीके उपलक्ष्यमें होनेवाली विद्वत्–सभाओंके अवसरपर मथुरामें स्थित श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, श्रीगोवर्धनमें स्थित श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ तथा श्रीरूप गोस्वामिपादके तिरोधान तिथि समाराधनमें श्रीवृन्दावनमें स्थित श्रीरूप–सनातन गौड़ीय मठमें उनकी सन्निधिमें भावांजलि प्रदान करनेका सुख ही कुछ अलग था। मुझे प्रतिवर्ष महाराजश्रीकी जन्मतिथिके उपलक्ष्यमें श्रीरूप–सनातन गौड़ीय मठमें भगवत्–कथा परिवेशनका सौभाग्य भी प्राप्त होता था।

महाराजश्रीकी मधुर, स्नेहपूर्ण, रसमयी तथा कुशल वचनावली

पूज्य महाराजश्री एक कुशल व्याख्यान दाता थे। उनके वचनोंमें अपूर्व मधुरिमा, सन्तुलन, उपयुक्तता एवं शक्ति थी। मुदिता (किसीके गुणोंकी प्रशंसा) एवं वात्सल्य उनके 'भाषणों' एवं 'हरिकथा' में झरता ही रहता था। जब वे अपने शिष्योंको 'प्रिय' एवं अपनी शिष्याओंको 'बेटी'–कहकर पुकारते, तो ऐसा प्रतीत होता, मानो 'वात्सल्य' भाव नृत्य कर रहा हो। कितना मुल्यवान् था उनका यह आशीर्वाद–''श्रीगुरु, गौर और गोविन्दकी कृपा तुमपर बरसे'' इत्यादि। शिष्योंके लिए इससे बढ़कर और क्या आशीर्वाद होगा? पूज्य महाराजश्रीका वैष्णव–सिद्धान्तमें प्रवेश इतना सुदृढ़ था कि छोटीसे छोटी चूकमें बड़े–बड़े वक्ता भी पकड़े जाते थे। बड़े मधुर शब्दोंमें समीक्षा एवं संशोधनकी क्षमता उनमें विद्यमान थी, अतः सभी वक्ता उनकी 'टिप्पणी' को बड़ी उत्सुकता एवं आदरके साथ सुनते तथा उसे स्वीकार भी करते थे।

सम्प्रदायको सुस्थिर बनानेवाले तीन अनिवार्य आयोजन

पूज्य महाराजश्रीके द्वारा किया गया ग्रन्थोंका प्रकाशन, अनेक मठोंकी स्थापना एवं यात्राओं (श्रीव्रजमण्डल, श्रीक्षेत्रमण्डल तथा श्रीगौरमण्डलकी परिक्रमाओं) का आयोजन भक्ति–आन्दोलनको नई स्फूर्ति देनेवाला हुआ है। ये तीनों ही कार्य सम्प्रदायको सुस्थिर बनानेवाले अनिवार्य घटक हैं। ग्रन्थ दिशानिर्देशक ज्योतिस्तम्भ अथवा 'रेडार' होते हैं। मन्दिर एवं मठ सम्प्रदायके विस्तारके

चिरन्तन स्रोत तथा संस्कृतिके 'मानक' होते हैं। यात्राएँ प्रकाश–प्रसार रूप हैं जो अपनी आभामें सबको अन्तर्भुक्त करती हैं।

उनकी लेखनी

पूज्यपाद महाराजश्रीने 'श्रीश्रीभागवत पत्रिका' के सम्पादक संघपति मण्डलमें मुझे भी सम्मिलित किया। कई बार उन्होंने उन विषयोंको छुआ जो सम्प्रदायमें बड़े विवादास्पद एवं भ्रमोत्पादक थे। 'प्रबन्ध पञ्चकम्' के निबन्ध उनकी बेवाक (निर्भीक) दृष्टिकोणके प्रमाण हैं। अपने पक्षको वे निर्भय होकर स्थापित करते थे।

उनकी गुणावली और वन्दन

पूज्य महाराजश्री महान् सेवा–धर्मी, साधकोंके आदर्श स्वरूप, विचारक, मनीषी एवं अथक लोक–नायक थे। उनमें सिद्धान्तकी दृढ़ता, विचारोंकी ऊर्जा, महामनाकी विशालता एवं व्यवहारका शिल्प युगपत् विराजमान था। ऐसे युग–पुरुषको कोटि–कोटि वन्दन।

[डॉ. गोस्वामी अच्युतलाल भट्ट, पी.एच.डी., श्रीभागवत भूषण, श्रीरघुनाथ भट्ट गोस्वामीकी आचार्य परम्परामें स्नात श्रीगदाधर भट्ट गोस्वामीके वंशज हैं तथा श्रीमद्भागवतके परम्परा–सिद्ध व्याख्याता तथा श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके सम्पादक संघके सदस्य हैं।]

दिव्यसूरि पूज्य महाराजश्री अदृश्य नहीं, बल्कि विशिष्टरूपमें श्रीकृष्णके धाममें विराजमान

श्रीविष्णु पाण्डे (शास्त्रीजी)

के द्वारा १० जनवरी २०११ को श्रीरूप-सनातन गौड़ीय मठ श्रीवृन्दावन धाममें आयोजित विरहसभा समारोहमें निवेदित वाचिक पुष्पाञ्जलि

आचार्य—साक्षात् भगवत्स्वरूप

सन्त और आचार्य—ये दोनों साक्षात् भगवत्स्वरूप ही होते हैं। भगवान् भक्तोंके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं चाहते हैं। भगवान्ने श्रीदुर्वासा ऋषिके समक्ष कहा था—

नाहमात्मानमाशासे मद्भक्तैः साधुभिर्विना।
श्रियञ्चात्यन्तिकीं ब्रह्मन् येषां गतिरहं परा॥

(श्रीमद्भा॰ ९/४/६४)

अर्थात् हे ब्रह्मन्! जिनका एकमात्र आश्रय मैं ही हूँ, उन साधु-स्वभाववाले भक्तोंके अतिरिक्त मैं न तो स्वयंको चाहता हूँ और न ही अपनी उस लक्ष्मीको, जिसका कभी भी विनाश नहीं होता।

विशिष्ट रागसे युक्त पूज्य महाराजश्री

यद्यपि साधारणतः 'वैराग्य' का अर्थ—'गुणेषु असंगो वैराग्यम्' [अर्थात् प्राकृत गुणोंके संसर्गसे रहित होना ही वैराग्य है] किया जाता है, तथापि 'वैराग्य' शब्दका यथार्थ तात्पर्य—'विशिष्टो रागाः इति विरागः, विरागस्य भावः वैराग्यम्' [अर्थात् जो विशिष्ट अर्थात् विशेष प्रकारका राग है, वही वैराग्य है] ही विशेषरूपसे स्वीकृत है।

ऐसा विशेष राग युक्त वैराग्य वैष्णव सन्त और पूज्य महाराजश्री जैसे आचार्योंमें ही देखनेको मिलता है।

भक्तजन—भगवान्को अपने स्वरूपसे भी अधिक प्रिय

विशेष रागयुक्त वैराग्यसे विभूषित गुणोंवाले वैष्णवोंके उद्देश्यसे ही श्रीमद्भागवतके एकादश स्कन्धमें भगवान् दो श्लोकोंके माध्यमसे अपने हृद्गत भावोंके विषयमें बतला रहे हैं। प्रथम श्लोकमें श्रीकृष्णने इस प्रकार कहा—

न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शङ्करः।
न च सङ्कर्षणो न श्रीर्नैवात्मा च यथा भवान्॥

(श्रीमद्भा॰ ११/१४/१५)

अर्थात् हे उद्धव! तुम मेरे भक्त होनेके कारण मुझे जिस प्रकार प्रियतम हो, मेरे पुत्र ब्रह्मा, स्वरूपभूत शङ्कर, भ्राता सङ्कर्षण, भार्या लक्ष्मीदेवी, यहाँ तक कि मेरा अपना स्वरूप भी मुझे उतना प्रिय नहीं है।

बताओ! ठाकुरजी, सन्त–भक्तोंकी प्रीतिके समक्ष अपने स्वरूपको भी अकिञ्चितकर (तुच्छ) कर देते हैं।

भगवान्‌के द्वारा भक्तोंकी चरणरजका संग्रह करना

भगवान् केवल भक्तोंके वशीभूत हो जाते हों, केवल इतना ही नहीं है, बल्कि भगवान् वैष्णवोंके पीछे–पीछे जाकर उनकी चरणरजका भी संग्रह करते हैं। दूसरे श्लोकमें श्रीकृष्णने कहा—

निरपेक्षं मुनिं शान्तं निर्वैरं समदर्शनम्।
अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यङ्घ्रिरेणुभिः॥

(श्रीमद्भा॰ ११/१४/१६)

अर्थात् हे उद्धव! मैं अपने भक्तोंकी चरणधूलिके द्वारा समस्त ब्रह्माण्डको पवित्र करूँगा, ऐसा सोचकर ही मैं सर्वदा निरपेक्ष (निष्काम), मेरे ही मनन–चिन्तनमें

भक्तोंकी चरणधूलिको एकत्रित करते श्रीकृष्ण

निमग्न, शान्त, वैरभावरहित और समदर्शी स्वभावसे युक्त अपने भक्तोंके पीछे–पीछे निरन्तर घूमा करता हूँ।

महाराजश्री 'निरपेक्षं.......समदर्शनम्' पदके साक्षात् मूर्तिमान स्वरूप

उक्त (श्रीमद्भा॰ ११/१४/१६) श्लोकके प्रथम–चरणमें कहे गये स्वरूपको यदि हम महाराजश्रीपर घटावें, तो वह स्पष्टरूपसे पूर्णतया घट रहा है।

'निरपेक्षम्'

'निरपेक्षम्'—इसका यथार्थ तात्पर्य है भगवान्‌के अतिरिक्त जिनको दूसरी कोई भी अपेक्षा नहीं है। जिस प्रकार 'भक्ति' निरपेक्ष होती है, उसी प्रकार भक्तिके मूर्तिमान स्वरूप होनेके कारण हमारे पूज्य महाराजश्री भी निरपेक्ष थे। भक्ति तथा भगवद्भावके अतिरिक्त उनकी और कोई भी अपेक्षा नहीं थी। भक्ति–सिद्धान्तका प्रचार और प्रसार, भागवतामृतसिन्धुकी तरंगे और कणिकाएँ तथा श्रीकृष्ण–भक्तिकी गन्ध विश्वमें प्रसारित हों—यही पूज्य महाराजश्रीकी सच्ची हार्दिक भावना थी।

इसलिए पूज्य महाराजश्रीके 'निरपेक्षं' होनेका स्वरूप स्पष्टरूपसे दिखलायी दे रहा है।

'मुनिम्'

'मुनिम्'—इसका यथार्थ तात्पर्य है सदैव भगवान्‌के ही मनन–चिन्तनमें रत रहना। पूज्य महाराजश्री सदा श्रीकृष्णभक्ति–रस और प्रेमलक्षणा–भक्तिका ही मनन किया करते थे तथा सभी जीवोंको वैसा मनन करानेमें सदा चेष्टारत भी थे।

भागवतके तात्पर्यार्थके विषयमें महाराजश्रीका मत

वर्ष २००७ ई॰ में पूज्य महाराजश्रीने श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ, गोवर्धनमें श्रीमद्भागवत (१२/१३/१२) में वर्णित 'कैवल्यैकप्रयोजनम्' विषयपर व्रजके बड़े–बड़े विद्वानोंकी एक सभा बिठायी थी।

उस सभामें मैंने अपना विचार इस प्रकार रखा था—"'*ज्ञानकर्मस्वर्गाद्यभिलाषाः रहिताः केवला अनन्यभक्तास्तेषां भावः कैवल्यं तदेव प्रयोजनं यस्य तदिति*' [अर्थात् ज्ञान, कर्म और स्वर्ग आदिकी अभिलाषासे रहित केवल अनन्य भक्तियुक्त भक्तोंके भावको ही 'कैवल्यं' कहा जाता है और यही श्रीमद्भागवतका प्रयोजन है]। कर्म, ज्ञान आदिसे पृथक् होकर 'तन्निष्ठ' भक्त अथवा भक्तिदेवी विराज रहे हैं। इसलिए भगवत् प्राप्तिका उपाय–स्वरूप 'प्रेम' ही इस श्रीमद्भागवतका प्रतिपाद्य विषय है।" बादमें महाराजश्रीने भी इसी पक्षका ही समर्थन किया। उनके विचार सुनकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। भागवतामृतसिन्धुके एकमात्र प्रयोजनके विषयमें बतलाते हुए महाराजश्रीने कहा कि एकमात्र प्रेमलक्षणा–भक्तिमें ही भागवतका तात्पर्यार्थ है।

पूज्य महाराजश्रीके प्रचारका उद्देश्य

पूज्य महाराजश्री सदैव जीवोंके उद्धारके लिए चिन्तित थे। उनके द्वारा विश्वभरमें भगवत्–धर्म (वैष्णव–धर्म) के प्रचार और प्रसार करनेका यही उद्देश्य रहा—जीवोंके उद्धारकी यात्रा श्रीकृष्णके चरणकमलोंमें शरणागत होनेसे प्रारम्भ होकर श्रीकृष्णकी प्रेम–लक्षणा–भक्तिकी प्राप्तिमें किस प्रकार पूर्ण हो? क्योंकि एकादश स्कन्धमें भगवान्‌की यही अन्तिम आज्ञा है—

तस्मात्त्वमुद्धवोत्सृज्य चोदनां प्रतिचोदनाम्।
प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च श्रोतव्यं श्रुतमेव च॥

मामेकमेव शरणमात्मानं सर्वदेहिनाम्।
याहि सर्वात्मभावेन मया स्या ह्यकुतोभयः॥

(श्रीमद्भा॰ ११/१२/१४–१५)

अर्थात् हे उद्धव! तुम श्रुति–स्मृति, विधि–निषेध, प्रवृत्ति–निवृत्ति, सुनने योग्य और सुने हुए विषयोंका भी परित्यागकर सर्वात्मभावसे समस्त प्राणियोंके अन्तर्यामी एकमात्र मेरे ही शरणागत हो जाओ। ऐसा करके तुम सर्वथा निर्भय हो जाओगे।

पूज्य महाराजश्री भगवान्‌के धाममें पार्षदके रूपमें विराजमान

पूज्य महाराजश्री अन्यत्र कहीं चले गये हैं, ऐसा मत समझना। वे विशिष्ट रूपमें भगवानके धाममें ही विराजमान हैं। भागवतमें भगवान्‌ने स्पष्टरूपसे कहा है—

मर्त्यो यदा त्यक्तसमस्तकर्मा
निवेदितात्मा विचिकीर्षितो मे।
तदामृतत्वं प्रतिपद्यमानो
मयात्मभूयाय च कल्पते वै॥

(श्रीमद्भा॰ ११/२९/३४)

अर्थात् मनुष्य जब समस्त कर्मोंको परित्याग करके मुझमें आत्मसमर्पण करता है, उस समय मेरी इच्छासे वह भक्ति–योगी ज्ञानीकी अपेक्षा अधिक ज्ञानसम्पन्न हो जाता है। **वह मेरी विशेष कृपाका पात्र हो जाता है।** तदनन्तर अमृतत्व प्राप्तकर मेरे समान ऐश्वर्य प्राप्त कर लेता है।

यहाँ 'विचिकीर्षितो' का तात्पर्य है—भगवान् 'वि' अर्थात् विशिष्ट रूपसे; 'चिकीर्षितो' अर्थात् चिकीर्षा (कृपा) करनेकी इच्छा करते हैं [क्योंकि यहाँ सन्नन्त क्रिया ('चिकीर्षितो') का प्रयोग हुआ है]। अतएव महापुरुषोंपर भगवान् विशेष रूपसे कृपा करनेकी इच्छा करते हैं अर्थात् लीला–परिकरके रूपमें उन्हें स्वीकार कर लेते हैं।

भगवान्‌की सत्ताकी भाँति महापुरुषोंकी सत्ता भी नित्य

महापुरुष और आचार्य जब प्राकृतिक आवरणको छोड़ देते हैं, तो इसका यह अर्थ नहीं होता कि उनकी सत्ता ही लुप्त हो गयी है। अपितु, उनकी सत्ता उसी प्रकार सदा बनी रहती है, जिस प्रकार भगवान्‌की सत्ता सदा बनी रहती है। यथा—श्रीबिल्वमंगलाचार्य श्रीकृष्ण–कर्णामृतके मंगलाचरण (द्वितीय श्लोक)में **"अस्ति स्वस्तरुणी–"** के द्वारा भगवान्‌की नित्य सत्ताका प्रतिपादन कर रहे हैं।

यदि भगवान् नित्य नहीं होते, तो 'अस्' धातु (क्रिया) का नित्य वर्त्तमानकालमें प्रयोग श्लोकके प्रारम्भमें होता ही नहीं। इस प्रकार कहनेका निगूढ़ तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण वृन्दावनमें नित्य विराजमान हैं, उसी प्रकार उस परमरसमय–वस्तुके ग्राहक अर्थात् लीला–परिकरोंकी सत्ता भी नित्य विराजमान है।

अतएव पूज्य महाराजश्री भी सदा श्रीश्रीराधाकृष्णके लीला–परिकरके रूपमें नित्य विराजमान हैं और वे निश्चित ही सदैव आपलोगोंको प्रेरणा देते रहेंगे।

महापुरुषोंकी नित्य सत्ताका प्रथम प्रमाण

श्रीमद्भागवतके गोपीगीत (१०/३१/९)में उक्त 'भूरिदा जनाः' [अर्थात् सर्वश्रेष्ठ–दान देनेवाले महापुरुष] की व्याख्या पूर्वाचार्य श्रीवल्लभाचार्यजीने अपनी सुबोधिनी टीकामें इस प्रकार की है—*'अतएव तादृशं कथामृतं ये भुवि गृणन्ति, त एव भूरिदाः बह्वर्थदातारः। य इति प्रसिद्धाः व्यासादयः। भूरिदा ते अजना । ते केवलं भगवद्रूपाः। जननादिदोषरहिता वा।'*

इसका तात्पर्य है कि जो लोग नित्य–विराजमान कथामृतका इस संसारमें कीर्तन करते हैं, वे ही 'भूरिदाः' अर्थात् बहुत अर्थ प्रदानकारी हैं। यहाँ 'जो' कहनेसे प्रसिद्ध श्रीव्यासादिको समझना होगा। वे भूरिदा भी हैं और जन्मरहित भी हैं, क्योंकि वे केवल भगवद्स्वरूप हैं अथवा जन्म आदिके दोषसे रहित हैं।

निष्कर्ष यह है कि विपुल रूपमें सर्वश्रेष्ठ दान देनेवाले जन्म–मरणसे रहित महापुरुषोंको ही 'भूरिदा जनाः' कहा गया है। ['भूरिदा जनाः' पदका समास इस प्रकार हुआ है—जनयति इति जनाः। न जनाः (जनयति) इति अजनाः।

श्रीव्यासदेव

अजनाः जन्म–मरणरहिता इत्यर्थः। भूरि ददति इति भूरिदा। भूरिदा ते अजना इति भूरिदा जनाः]

यदि प्रश्न हो कि श्रीनारद, श्रीव्यासादि जितने भी भागवत सम्प्रदायके महापुरुषगण हुए हैं, क्या वे सब चले गये हैं अर्थात् क्या उनकी सत्ता समाप्त हो गयी है? पूर्वाचार्योंके मतानुसार इसका यही उत्तर है—नहीं! उनकी सत्ता सदा वर्तमान है। यहाँ तक कि ऐसे महापुरुषों द्वारा दान दिये गये कथामृतका पान करनेवालोंकी भी सत्ता नित्य विराजमान रहती है।

पूज्य महाराजश्री भी ऐसे ही 'भूरिदा जनाः' हैं, क्योंकि उन्होंने सर्वत्र भागवत–कथामृतका विपुलरूपमें दान दिया है। इसीलिए वे सदा विद्यमान हैं। निष्कर्ष यही है कि—**'यथा व्यासादयः यथा नारदादयः, तथैव अस्मद् स्वामिपादाः नारायण माहात्मनोऽपि'** [अर्थात् जिस प्रकार श्रीव्यास, श्रीनारद आदि जन्म–मरण रहित होकर सदा विद्यमान हैं, उसी प्रकार हमारे स्वामिपाद श्रीभक्तिवेदान्त नारायण महाराज भी जन्म–मरण रहित होकर सदा विद्यमान हैं]।

श्रीनारद मुनि

महापुरुषोंकी नित्य सत्ताका द्वितीय प्रमाण

यदि महापुरुषोंकी सत्ता नित्य नहीं होती, तो फिर वेदमें **'तद्विष्णो परमं पदं सदा पश्यन्ती सूरयः'** क्यों कहा जाता? 'सदा' शब्दका काल अर्थमें 'दा' प्रत्यय है, आपलोग जिसे always कहते हैं। पूज्य महाराजश्री ऐसे सूरि है कि वे सदा इस धामके स्वरूपका दर्शन करते रहेंगे, ऐसा नहीं! अपितु वर्त्तमान कालमें सदा कर रहे हैं।

एक दिव्य सूरि

श्रीभागवतके प्रथम मङ्गलाचरण श्लोकमें 'मुह्यन्ती यत् सूरयः' पदमें जिन सूरिजनोंके शरणागतिके अभावके कारण वेदोंके तात्पर्यार्थको नहीं समझने हेतु मोहित हो जानेकी बात कही गयी है, हमारे पूज्य दिव्य सूरि महाराजश्री उनसे सर्वथा भिन्न थे, क्योंकि वे भगवान् द्वारा कहे गये—**'मामेकमेव शरणमात्मानं सर्वदेहिनाम्'** [समस्त प्राणियोंके अन्तर्यामी एकमात्र मेरे ही शरणागत हो जाओ] (श्रीमद्भा॰ ११/१२/१४–१५) के तात्पर्यार्थको समझनेवाले

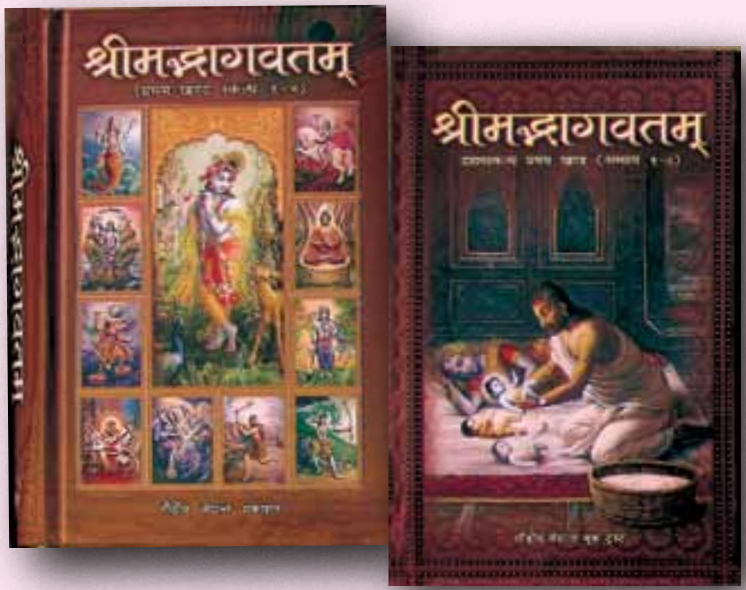

तथा शरणागतिकी चरमसीमामें प्रतिष्ठित थे। उन्होंने उसंख्य जीवोंको भगवान्‌के शरणागत करके उनका उद्धार किया है। ऐसे गुरुकर्णधारके रूपमें वे सदैव भगवत्–धाममें विद्यमान हैं और आप लोगोंको प्रेरणा देते रहेंगे।

महाराजश्रीकी अन्तिम इच्छा

पूज्य महाराजश्री एक बड़ी सुन्दर बात कहते थे। वे मुझे कहा करते थे—"पण्डित जी! श्रीभागवतपर गीताप्रेस गोरखपुरका जो अनुवाद है, वह मायावादियोंके अनुसार हुआ है। मेरी ऐसी इच्छा है कि इस मायावादको पलटकरके और गीताप्रेस गोरखपुरकी व्याख्यासे भिन्न वैष्णव सिद्धान्तके अनुसार सारार्थदर्शनी और जितनी भी हमारे आचार्योंकी टीकाएँ हैं, उनके आधारपर श्रीभागवतके १८००० श्लोकोंका अनुवाद होना चाहिए।" ये उनकी प्रबल इच्छा[१] थी।

महाराजश्रीके आश्रितजनोंका कर्त्तव्य

तो भैया! आपलोग यदि महाराजश्रीके अनुगत रहोगे तो आप लोगोंमें भी भागवत् धर्मका प्रकाश अवश्य होगा, जिसके फलस्वरूप उनके मनोऽभीष्टको पूर्ण करनेका सामर्थ्य आप लोगोंको प्राप्त होगा। शास्त्रोंमें स्पष्ट कहा गया है कि

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः॥

(श्वेताश्वतर उपनिषद् ६/२३)

अर्थात् जिनकी श्रीभगवान्‌में पराभक्ति है और श्रीभगवान्‌के समान ही श्रीगुरुदेवके प्रति भी शुद्धभक्ति है, उसी महात्माके हृदयमें श्रुतियोंके सभी मर्मार्थ प्रकाशित होते हैं।

महाराजश्री कब प्रसन्न होंगे? जब आप लोग उनकी भावनाके अनुसार जीवनभर जैसा प्रचार–प्रसार उन्होंने किया, वैसा ही प्रचार–प्रसार, उनके द्वारा प्रवर्तित धर्मका संरक्षण, उनकी वस्तुओंका संरक्षण एवं उनके धामों [अर्थात् उनके द्वारा धामोंमें स्थापित शुद्धभक्तिकेन्द्रोंका एवं उनके द्वारा प्रवर्त्तित धाम परिक्रमाओं] का संरक्षण करेंगे, तभी वे प्रसन्न होंगे। और उनकी प्रसन्नताके फलस्वरूप ही आप लोगोंमें भी भागवत्धर्म प्रकाशित होगा।

भैया! महाराजश्री साक्षात् भगवत् स्वरूप थे। उन्होंने विश्वमें भक्तिग्रन्थोंका प्रचार–प्रसार किया और अब आपलोग भी उनके द्वारा दिखलाये गये पथपर ही चलते रहो और भक्तिसिद्धान्तमें अटल रहो। आपलोग अपने आचार्योंके अनुसार सदा अपने दासत्वका स्मरण करते हुए **"गोपीभर्त्तुः पदकमलयो–र्दास–दासानुदासः"**

अर्थात् गोपियोंके भर्त्ता श्रीकृष्णके चरणकमलोंके दास–दासानुदासके भावमें प्रतिष्ठित होओ।

इस प्रकार पूज्य महाराजश्रीके चरणकमलोंमें शब्दरूपी पुष्पाञ्जलि समर्पित करके अपने जीवनको कृतकृत्य करते हुए मैं अपनी वाणीको विश्राम देता हूँ।

[श्रीविष्णुदत्त पाण्डे (शास्त्रीजी) व्याकरण, वेदान्त, साहित्य आचार्य श्रीमथुरापुरीके वल्लभ सम्प्रदायके विद्वान् वैष्णव हैं।]

१ [श्रील गुरुदेव अपनी अप्रकट लीलासे पूर्व श्रीमद्भागवतके श्लोकानुवादको सम्पूर्ण रूपसे तथा दशम स्कन्धके टीका सहित अनुवाद कार्यको प्रायः पूर्ण करके ही गये हैं]

पूज्य महाराजश्री—रागानुगा-भक्तिकी जीती-जागती (जीवन्त) प्रतिमूर्ति

गोस्वामी श्रीदीपक कुमार भट्ट

के द्वारा ९ जनवरी २०११ को श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ, गोवर्धनमें आयोजित विरहसभा समारोहमें निवेदित वाचिक पुष्पाञ्जलि

प्यारे वैष्णवों, उपस्थित विद्वत् जनों! आपलोगोंके बीचमें [मैं] एक व्रजवासी बालक बैठा हूँ। क्षमा सहित कुछ अनुरोध कर रहा हूँ—

व्रजवासियों द्वारा गान की जानेवाली हरिकथासे ही त्रिभुवन पवित्र

व्रजगोपियोंके उद्देश्यसे उद्धवजीने कहा है—

वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणां पादरेणुमभीक्ष्णशः।
यासां हरिकथोद्गीतं पुनाति भुवनत्रयम्॥

(श्रीमद्भागवत १०/४७/६३)

अर्थात्, मैं श्रीनन्दराजके व्रजकी गोपियोंके चरणकमलोंकी धूलिकी बार-बार वन्दना करता हूँ, जिनके द्वारा गान की जानेवाली श्रीकृष्ण-कथा त्रिभुवनको पवित्र करती है।

पुनः अन्यत्र भी उद्धवजीने व्रजगोपियोंके विषयमें कहा है—

क्वेमाः स्त्रियो वनचरीर्व्यभिचारदुष्टाः,
कृष्णे क्व चैष परमात्मनि रूढ़भावः।
नन्वीश्वरोऽनुभजतोऽविदुषोऽपि साक्षा-
च्छ्रेयस्तनोत्यगदराज इवोपयुक्तः॥

(श्रीमद्भागवत १०/४७/५९)

अर्थात् अहो! कहाँ तो इन वनचरी गोपियोंका श्रीकृष्णके प्रति रूढ़भावमय परमप्रेम और कहाँ कृष्णभक्तिके विषयमें व्यभिचार दोषसे दुष्ट मेरे जैसे

समस्त लोग? किन्तु जिस प्रकार महा–औषधि अथवा अमृतके गुण और महिमाको न जाननेपर भी उसका सेवन करनेसे मङ्गल ही होता है, उसी प्रकार इन व्रजगोपियोंकी महिमाको न जाननेपर भी यदि कोई इनके अनुगत होकर भजन करता है, तो श्रीभगवान् उसका भी कल्याण करते हैं।

वास्तविक व्रजवासी जागतिक किसी वस्तुकी आकाङ्क्षा नहीं करते

श्रीचैतन्य महाप्रभुने भी एक ही बात कही है कि जबतक श्रीकृष्णके प्रति प्रेम नहीं होगा, यह शरीर धारण करना व्यर्थ है। कलियुगपावन अवतारी श्रीचैतन्य महाप्रभुने अपने सम्पूर्ण जीवनमें केवल शिक्षाष्टक ही बोला था।

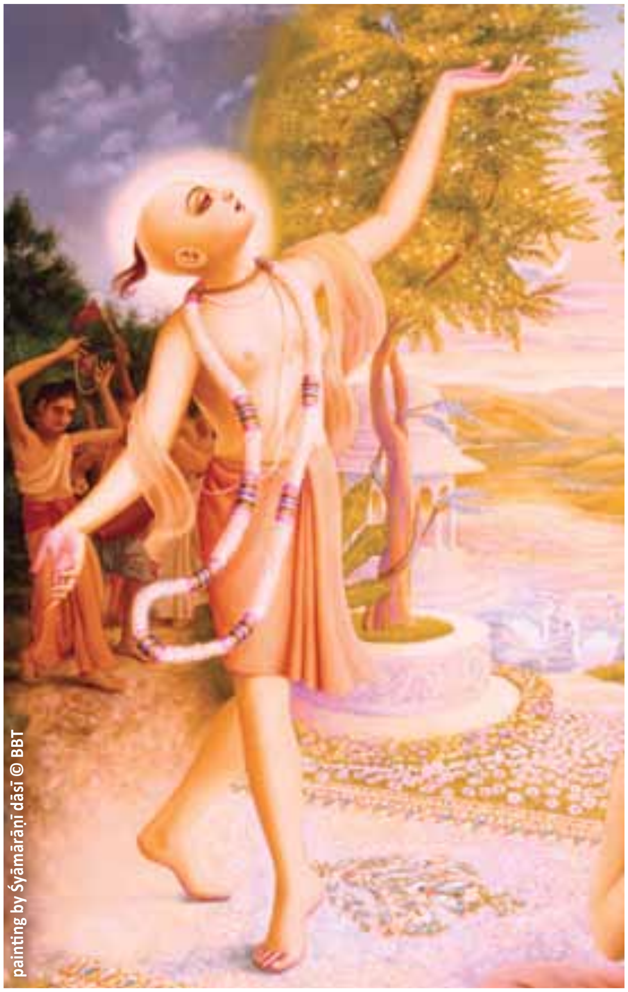

उस शिक्षाष्टकमें उन्होंने जो एक बात कही है, वह सीधा व्रजवासियोंकी बात ही कही है—

न धनं न जनं न सुन्दरीं
कवितां वा जगदीश कामये।
मम जन्मनि जन्मनीश्वरे
भवताद्भक्तिरहैतुकी त्वयि॥

(श्रीशिक्षाष्टक ४)

हे जगदीश! न मैं धन चाहता हूँ, न जन चाहता हूँ, न सुन्दरी कविता ही चाहता हूँ। हे प्राणेश्वर! मैं केवल इतना चाहता हूँ कि आपके श्रीचरणकमलोंमें मेरी जन्म–जन्मान्तर अहैतुकी भक्ति हो।

व्रजवासियोंको धन नहीं चाहिए, क्योंकि व्रजके विषयमें तो गोपियोंने स्वयं ही कहा है—

जयति तेऽधिकं जन्मना व्रजः,
श्रयत इन्दिरा शश्वदत्र हि।

(श्रीमद्भा॰ १०/३१/१)

हे प्रियतम! तुम्हारे द्वारा इस व्रजमें जन्म लेनेके कारण यह व्रजमण्डल वैकुण्ठ आदि लोकोंसे भी अधिक महिमायुक्त हो रहा है। इसी कारणसे सब प्रकारके सौन्दर्य और सम्पत्तिकी अधिष्ठात्री देवी श्रीलक्ष्मी सदा–सर्वदा इस व्रजको अलंकृत करती हुई यहाँ निवास कर रही हैं।

पूज्य महाराजश्री—एक वास्तविक व्रजवासी

पूज्य महाराजश्री एक वास्तविक व्रजवासीके उपरोक्त तथा अन्यान्य समस्त गुणोंसे विभूषित थे। वे रागानुगा–भक्तिकी जीती–जागती प्रतिमूर्ति थे। वे व्रजप्रेमसे पूर्णतया आप्लावित थे। यदि उन्हें व्रज प्रेमकी मुखरित मञ्जुषा [व्रजप्रेम–तत्त्वके वाचाल अभिधान] कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। महाराजश्रीको देखनेसे ही लगता था कि कोई व्रजवासी आ रहा है। व्रजमें जन्म

लेनेसे ही कोई व्रजवासी नहीं होता है, क्योंकि जिस व्रजमें व्रजवासियोंने जन्म ग्रहण किया, उसमें तो अघासुर, बकासुर आदि असुर भी पैदा हुए हैं।

व्रजवासी रागानुगा–भक्ति और प्रेमको देखनेवाले

पूज्य श्रीनारायण महाराजजीसे हम व्रजवासियोंका एक सहज स्नेह था। क्यों? क्योंकि व्रजवासी किसीकी विद्वत्ताको नहीं देखते, व्रजवासी किसीके सम्प्रदायको नहीं देखते, न ही वे किसीकी परम्पराको देखते हैं। व्रजवासी देखते हैं तो एकमात्र किसीकी रागानुगा–भक्ति और प्रेमको देखते हैं। वास्तवमें पूज्य महाराजश्री उस रागानुगा–भक्तिके जीवन्त विग्रह थे जिसे व्रजाचार्य श्रील नारायण भट्टने अपने ग्रन्थ 'भक्तिरस तरंगिणी' में वर्णन किया है। पूज्य महाराजश्रीने व्रजवासियोंकी रागानुगा–भक्तिको समस्त जगतमें वितरण किया, इसलिए समस्त व्रजवासियोंने एकत्रित होकर पूज्य महाराजश्रीको 'युगाचार्य' उपाधि प्रदानपूर्वक उनका वन्दन किया था।

देखिये! महामण्डलेश्वर, जगद्गुरु, विश्वगुरु पता नहीं क्या–क्या उपाधियाँ धर्मसंस्थान, अखाड़े, परिषद् आदि देते रहते हैं। किन्तु व्रजवासियोंने किसी एक भी धर्माचार्यका ऐसा सम्मान किया हो, कोई भी धर्माचार्य आकर हम व्रजवासियोंके सम्मुख ऐसा नहीं कह सकता।

महाराजश्री कहीं नहीं गये

यद्यपि यह तो संसार है, जिसे आना है, उसे अवश्य बिछडना है। किन्तु महाराजश्री कहीं चले गये हैं–इसे

भूल जाइये। मैं कभी भी इसे स्वीकार नहीं करूँगा। यदि आप मेरे सामने तुलसी दल और शालग्राम हाथमें लेकर शपथ भी लेंगे, तब भी हम व्रजवासी लोग इसे स्वीकार नहीं करेंगे कि महाराजजी चले गये हैं। हम किसी भी कीमतपर इसे स्वीकार नहीं कर सकते, क्योंकि हम साक्षात् रागानुगा–भक्तिमें जीते हैं। आज ५५०० वर्ष बीत जाने पर भी अष्टसखियोंके गाँवमें आप आइए। देखिए! आज भी आपको ताजा मक्खन नहीं मिल सकता, एक दिन पहलेवाला ही मिलेगा। क्योंकि हमें पता है कि आज भी वह नन्दका लाला आकर मक्खन खाता है। वो कहीं गया नहीं, बल्कि सर्वदा व्रजमें रहता है और आकर मक्खन खाता है। उसी प्रकार व्रजकी रागानुगा–भक्तिके जीवन्त स्वरूप पूज्य महाराजश्री भी इस व्रजमें सर्वदा विराजित हैं।

पूज्य महाराजश्री रागानुगा–भक्तिको माननेवालोंके हृदयमें सदैव विराजित

यद्यपि महाराजश्री वाणीके विषय नहीं हैं, तथापि अन्तमें मैं दो शब्द कहकर अपनी वाणीको विराम दूँगा। पूज्य महाराजश्री हमारे हृदयमें विराजमान हैं, सदा रहेंगे और जबतक पृथ्वी रहेगी तब तक रहेंगे। जबतक यह सृष्टि है, तबतक महाराजश्री उन सबके हृदयमें स्थित रहेंगे, जो व्रजप्रेमसे विभावित हैं, जो रागानुगा–भक्तिको माननेवाले हैं, किन्तु यदि असुर हैं, तब फिर दूसरी बात है।

पूज्य महाराजश्रीकी धरोहर

स्मरण रखिए यह मठ जो महाराजजी द्वारा स्थापित है आपके पास उनकी धरोहर हैं और महापुरुषोंकी धरोहरको भंग करनेवाला कभी भी क्षमा नहीं किया जा सकता।

पूज्यपाद महाराजश्रीका नित्यलीलामें प्रवेश गोलोकके लिए एक वरदान एवं व्रजमण्डलके लिए हिमपातके समान है

समस्त व्रजवासियोंकी ओरसे,
गोस्वामी दीपक कुमार भट्ट
व्रजाचार्य पीठाधीश्वर
९/१/२०११

[गोस्वामी श्रीदीपक कुमार भट्ट व्रजाचार्य श्रीलनारायण भट्टजीके वंशज तथा 'व्रजाचार्य–पीठ' ऊँचागाँव (बरसाना) के वर्तमान पीठाधीश्वर हैं।]

वाणी–वैशिष्ट्य–सम्पद्—१

[श्रील गुरुदेव और श्रीमन्महाप्रभु]

[श्रील गुरुदेवके प्रकट कालमें उनकी हरिकथारूपी वाणी तथा प्रबन्धादिके माध्यमसे जगत्‌में गौड़ीय–वैष्णव विचार–धाराके अनेक वैशिष्ट्य प्रकाशित हुए हैं। यदि श्रील गुरुदेवको अप्राकृत विशेषताओंका अपार समुद्र कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। श्रील गुरुदेवकी कृपासे ही उनके वाणी–वैशिष्ट्यरूपी समुद्रको मन्थन करनेसे जिस अमृतधाराका सन्धान प्राप्त हुआ है, उसके अन्तर्गत 'श्रीमन्महाप्रभुके दानकी विशेषता' रूपी अमृत भी विद्यमान है। अत्यधिक गूढ़ तत्त्वोंको अति सरल सहजरूपमें व्यक्तकर देना ही श्रील गुरुदेवकी एक विशेषता थी। इस विशेषांकसे आरम्भ करके क्रमशः हम श्रील गुरुदेवके वाणी–वैशिष्ट्य–सम्पदको अत्यन्त यत्न और गौरवके साथ गौर भक्तवृन्दके समक्ष प्रस्तुत करनेकी चेष्टा करेंगे।]

©Saradā dāsī

©Kṛṣṇakaruṇya

श्रीश्रीमन्महाप्रभुके दानकी विशेषता

श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज

द्वारा श्रीचैतन्य महाप्रभुकी पञ्चशतवार्षिक आविर्भाव तिथिके
उपलक्ष्यमें वर्ष १९८६में लिखित प्रबन्धसे संकलित एवं अनुवादित

नमो महावदान्याय कृष्णप्रेम-प्रदाय ते।
कृष्णाय कृष्णचैतन्य नाम्ने गौरत्विषे नमः॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत मध्य १९/५३)

अर्थात् महावदान्य, कृष्णप्रेम प्रदाता, कृष्णस्वरूप, कृष्णचैतन्य नामक, गौराङ्गरूपधारी प्रभुको नमस्कार है। [इस श्लोकमें संक्षेपमें श्रीमन्महाप्रभुका नाम, रूप, गुण और लीला वर्णित हुई है। अर्थात् उनका नाम—श्रीकृष्णचैतन्य, उनका रूप—गौरवर्ण, उनका गुण—महावदान्यता एवं उनकी लीला—'कृष्णप्रेम प्रदान' करना है।]

व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्ण ही सच्चिदानन्दघन परब्रह्म स्वयं-भगवान् हैं। वे अनादिकालसे अनन्तरूपोंमें आत्मप्रकाश करके विराजित हैं। उन समस्त प्रकाशोंमेंसे वासुदेव, नारायण, राम, नृसिंह आदि उनके अंश हैं—यह श्रुति, स्मृति, पुराण-शिरोमणि श्रीमद्भागवत् आदि शास्त्रोंके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त है।

परम भगवानके दो मूल नित्य-स्वरूप

परमब्रह्म, रसिकशेखर स्वयं भगवान् श्रीकृष्णका और भी एक नित्यस्वरूप है, किन्तु वह स्वरूप उनका अंश नहीं है; उनके उस स्वरूपमें भी स्वयं भगवत्ता नित्य-विराजित है। वह स्वरूप व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णके समान श्यामवर्ण न होकर पीतवर्ण है।

श्रीमद्भागवतमें करभाजन ऋषिने कलियुगके आराध्य भगवत्स्वरूप एवं उनकी आराधना-प्रणालीके सम्बन्धमें इस प्रकार वर्णन किया है—

कृष्णवर्णं त्विषाऽकृष्णं सङ्गोपाङ्गास्त्रपार्षदम्।
यज्ञैः सङ्कीर्त्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः॥

(श्रीमद्भा॰ ११/५/३२)

अर्थात् हे राजन्! जो सदा सर्वदा 'कृष्ण'—इन दो वर्णोंका कीर्त्तन करते हैं, जिनकी अङ्गकान्ति 'अकृष्ण' अर्थात् गौर या पीत है, अपने अङ्ग—श्रीनित्यानन्द प्रभु; उपाङ्ग—श्रीअद्वैताचार्य; अस्त्र—श्रीकृष्णनाम और पार्षद—श्रीगदाधर, श्रीस्वरूपदामोदर, श्रीरायरामानन्द एवं श्रीवासादि परिकरगणोंके द्वारा परिवेष्टित महापुरुषकी सुबुद्धिमान व्यक्ति सङ्कीर्त्तन—प्रधान यज्ञके द्वारा आराधना किया करते हैं।

उक्त श्लोककी टीकामें श्रील सनातन गोस्वामी, श्रील जीव गोस्वामी एवं श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती

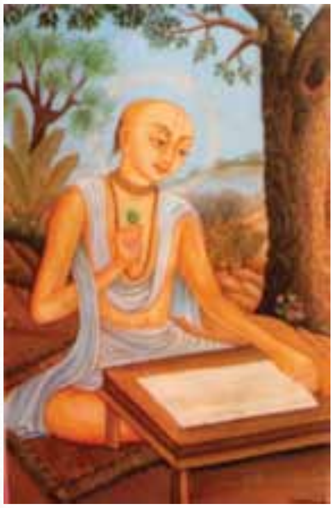

ठाकुर आदि श्रीमद्भागवतके प्रमुख टीकाकारोंने विभिन्न शास्त्रीय प्रमाणों एवं अकाट्य युक्तियोंके सुदृढ़ आधारपर—'कृष्णवर्णं' पदका अर्थ—'कृष्ण' यह दो वर्ण अथवा कृष्णके नाम–रूप–गुण–लीला–परिकरोंका वर्णन करनेवाले अर्थात् कीर्त्तन करनेवाले एवं 'त्विषाऽकृष्णं' पदका अर्थ—गौर अथवा पीतकान्तियुक्त किया है।

मुण्डक–श्रुतिमें भी पीतवर्णधारी स्वयं भगवान्‌का उल्लेख और भी स्पष्टरूपमें वर्णित किया गया है—

यदा पश्यः पश्यते रुक्मवर्णं
कर्त्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम्।
तदा विद्वान् पुण्यपापे विधूय
निरञ्जनः परमं साम्यमुपैति॥

(मुण्डकोपनिषद् ३/३)

अर्थात् जब कोई सौभाग्यवान व्यक्ति कर्त्ता, ईश्वर, ब्रह्मयोनि, रुक्मवर्ण पुरुषका दर्शन करता है, तब वह विवेकवान पुरुष पाप–पुण्यसे सम्पूर्णरूपसे निर्मल, निरञ्जन और विद्वान् (दिव्य–ज्ञान प्राप्तकर) भगवान्‌के साथ परम साम्य–अवस्थाको अर्थात् उनके समान दिव्य रूपको प्राप्त करता है।

यहाँपर 'रुक्म' का अर्थ सुवर्ण है; अतएव रुक्मवर्णका अर्थ सुवर्णवर्ण अर्थात् सुवर्णके समान पीतवर्ण है। उक्त श्रुतिमन्त्रके कथनका तात्पर्य यह है कि वे रुक्मवर्ण—पीतवर्ण पुरुष समस्त कारणोंके कारण—सर्वकर्त्ता अर्थात् सर्वेश्वरेश्वर हैं। वे ब्रह्मयोनि अर्थात् ब्रह्मकी भी प्रतिष्ठा हैं। जिस प्रकार श्रीकृष्ण ब्रह्मकी प्रतिष्ठा हैं, 'ब्रह्मणो प्रतिष्ठाऽहम्' (गीता १४/२७) [अर्थात् मैं ब्रह्मकी प्रतिष्ठा हूँ], उसी प्रकार यह पीतवर्ण पुरुष भी ब्रह्मयोनि अर्थात् ब्रह्मकी प्रतिष्ठा हैं। इसीलिये यह पीतवर्ण पुरुष भी स्वयं भगवान् हैं, यह सुस्पष्ट

है। स्वयं-भगवान् श्रीकृष्ण श्यामवर्ण एवं स्वयं भगवान् श्रीगौरसुन्दर पीतवर्णके हैं। अब सन्देह हो सकता है कि स्वयं भगवान् क्या दो व्यक्ति हैं?

स्वयं भगवान् कभी भी दो व्यक्ति नहीं हो सकते। **'एकमेव अद्वितीयम्'** (छान्दोग्योपनिषद् ६/२/१) [अर्थात् परब्रह्मके समान या उनसे श्रेष्ठ दूसरा कोई नहीं है, परब्रह्म मात्र एक हैं।]—यह श्रुतियोंका सिद्धान्त है। परब्रह्म स्वयं भगवान्—अद्वयज्ञान तत्त्व हैं। अतएव स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण एवं स्वयं भगवान् श्रीगौरसुन्दर कदापि दो व्यक्ति नहीं हैं।

मूल श्रुति-मन्त्रके 'साम्य' शब्दका अर्थ है—उनके समान गुणवान् अथवा प्रतिभाशाली अर्थात् श्रीगौरसुन्दरका दर्शन करके दर्शक उनके समान ही प्रेमवान हो जाता है। एवं उनमें दूसरोंको भी प्रेम दान करनेकी शक्ति सञ्चारित हो जाती है—

जारे देखे ता'रे कहे,—कह कृष्णनाम।
एइमत वैष्णव कैल सब निज ग्राम॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत आदि १३/३०)

अर्थात् श्रीमन्महाप्रभुकी शक्तिसे सञ्चारित होनेवाले वैष्णवोंने जिन्हें भी देखा उन्हें श्रीकृष्णनाम ग्रहण करनेको कहा। इस प्रकार उन्होंने अपने ग्राम अर्थात् समस्त ग्रामवासियोंको भी वैष्णव बना दिया।

अतएव श्रीचैतन्यमहाप्रभु स्वयं भगवान् हैं, यह श्रुति–स्मृति– पञ्चमवेद महाभारत एवं समस्त प्रमाण–शिरोमणि श्रीमद्भागवतका सिद्धान्त है।

श्रीगौरहरिकी अद्भुत करुणाका विकास

कृष्णवर्णके श्रीनन्दनन्दनकी अपेक्षा इन पीतवर्ण श्रीशचीनन्दनकी करुणाका वैशिष्ट्य अधिक है।

आनन्दकन्द करुणावरुणालय श्रीभगवान्की प्रत्येक लीलामें ही करुणा विद्यमान रहती है। प्रत्येक भगवद्–स्वरूप, प्रत्येक भगवद्–अवतार ही करुणामय होते हैं। करुणा—भगवान्का स्वरूपधर्म है। भगवत्ताका सार ही माधुर्य है एवं माधुर्यका विकास एकमात्र करुणामें ही है। यदि भगवान्की करुणाका विकास न हो, तो भगवान्के ऐश्वर्य–माधुर्य, उनकी दिव्य गुणावली, जीव एवं जगतके चित्तको आकर्षित करनेवाली उनकी लीलाओंका दृष्टिगोचर होना तो दूरकी बात, मन और बुद्धिके द्वारा उनका चिन्तन, स्मरण और अनुभव भी दुर्लभ और असम्भव हो जाता।

अगणित–अनन्त सृष्टि भगवान्की करुणाका क्षेत्र होनेपर भी उस करुणाका मुख्य लक्ष्य है—जीव समुदाय। भगवद्–उन्मुख जीवोंको निखिल ऐश्वर्य–माधुर्यमय लीला–रसामृत–सिन्धुमें आप्लावित करनेमें ही करुणाका असमोर्द्ध विकास है; भगवद्–विमुख जीवोंको यथासम्भव कौशलके द्वारा अपने (सच्चिदानन्द श्रीभगवान्के) प्रति उन्मुख करानेमें ही उस करुणाका विकास है एवं भगवद्भक्त–विरोधी दुष्कृत दैत्य–दानवोंका विनाश करके उनको मुक्ति आदि प्रदान करनेमें भी भगवद्करुणाके विचित्र विकासको लक्ष्य किया जा सकता है।

प्रपञ्चमें समस्त भगवद्–अवतारोंके अवतरणका मूलकारण—साधु– भक्तोंका रक्षण, असाधु असुरोंका विनाश और अधर्मको निरस्तकर (खण्डनकर) धर्म–संस्थापन ही निरूपित हुआ है—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।

painting by Śyāmarāṇī dāsī © BBT

अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

(गीता ४/७–८)

अर्थात् हे भारत! जब–जब धर्मकी हानि और अधर्मकी वृद्धि होती है, तब–तब मैं अपने नित्यसिद्ध देहको प्रकट करता हूँ। मैं अपने एकान्तिक भक्तोंके परित्राण, दुष्टोंके विनाश एवं धर्मकी संस्थापनाके लिए युग–युगमें आविर्भूत होता हूँ।

श्रीशुकदेव गोस्वामीने भी कहा है—

यदा यदेह धर्मस्य क्षयो वृद्धि पापानः।
तदा तु भगवानीश आत्मानं सृजते हरि॥

(श्रीमद्भा॰ ९/२४/५६)

अर्थात् जब–जब संसारमें धर्मका ह्रास एवं पापकी वृद्धि होती है, तब–तब सर्वशक्तिमान श्रीहरि अवतार ग्रहण करते हैं।

इस प्रकार अन्यान्य अवतारोंके आविर्भूत होनेके कारणके सम्बन्धमें विचार करनेपर हम इस निष्कर्षपर पहुँचेंगे कि साधुजन–रक्षण, असुर–विनाशन एवं अधर्म–विनाशपूर्वक धर्म–संस्थापन ही समस्त भगवद्–स्वरूपोंके अवतारका कारण है। किन्तु श्रीचैतन्य महाप्रभुके आविर्भावके मूलमें जिन तीन विशेष कारणोंका उल्लेख देखा जाता है, अन्य किसी अवतारके आविर्भावमें इन तीन कारणोंमेंसे एकका भी उल्लेख दिखलायी नहीं देता।

श्रीगौरहरिके अवतरणके तीन अपूर्व उद्देश्य

प्रथमतः, वे अपनी करुणाके वशीभूत होकर अवतीर्ण हुए थे। **द्वितीयतः**, वे परमोज्जवल रसमयी स्वभक्ति–सम्पत्तिको दान करनेके लिये अवतरित हुए थे। **तृतीयतः**, वे अपने असमोर्ध्व [न अपने समान और न अपनेसे श्रेष्ठ] विविध माधुर्यभावोंको श्रीमती राधिकाके समान स्वयं रसास्वादनके लोभसे श्रीराधाभाव और कान्तिसे युक्त होकर आविर्भूत हुए थे।

श्रीरूप गोस्वामीने श्रीशचीनन्दन गौरहरिके आविर्भावकी पटभूमिपर प्रथमोक्त दो कारणोंका उल्लेख किया है—

अनर्पितचरीं चिरात् करुणयावतीर्ण कलौ
समर्पयितुमुन्नतोज्जवल–रसां स्वभक्तिश्रियम्।
हरिः पुरट–सुन्दरद्युतिः कदम्बसन्दीपितः
सदा हृदय–कन्दरे स्फुरतु वः शचीनन्दनः॥

(विदग्धमाधव १म अङ्क द्वितीय श्लोक)

अर्थात् जो सर्वोत्कृष्ट उन्नत–उज्जवल–रस चिरकाल तक जगतको दान नहीं किया गया, उसी परमोज्जवल–रसमयी स्वभक्तिरूपी सम्पत्तिको

painting by Śyāmarāṇi dāsī © BBT

दान करनेके लिये जो परमकरुणावश कलिकालमें अवतीर्ण हुए हैं, सुवर्णकान्तिके द्वारा देदीप्यमान वे श्रीशचीनन्दन गौरहरि तुम्हारे हृदयमें स्फुरित हों।

तृतीय कारणके सम्बन्धमें श्रीलस्वरूप दोमादर गोस्वामीने उल्लेख किया है—

श्रीराधाया: प्रणयमहिमा कीदृशो वानयैवा—
स्वाद्यो येनाद्भुत–मधुरिमा कीदृशो वा मदीय:।
सौख्यञ्चास्या मदनुभवत: कीदृशं वेति लोभात्
तद्भावाढ्य: समजनि शचीगर्भसिन्धौ हरीन्दु:॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत आदि १/६)

अर्थात् श्रीराधाके प्रणयकी महिमा कैसी है? मेरी अद्भुत मधुरिमा, जिसका श्रीराधा आस्वादन करती हैं, कैसी है? मेरी मधुरिमाकी अनुभूतिसे श्रीराधाको किस सुखकी प्राप्ति होती है?—इन तीन विषयोंमें लोभ उत्पन्न होनेपर श्रीकृष्णरूपी चन्द्रने शचीगर्भरूपी समुद्रसे जन्म ग्रहण किया।

यद्यपि समस्त भगवद्–अवतारोंके आविर्भावका मूल कारण—साधुजन रक्षा, असुर–विनाशन और धर्म–स्थापनादि—जीवोंके प्रति भगवद्–करुणाका ही परिचायक है, तथापि श्रीगौर–आविर्भावके अतिरिक्त अन्य किसी भगवद्–अवतारके आविर्भावके कारणोंमें 'करुणा' शब्दका स्पष्ट उल्लेख नहीं पाया जाता। अतएव अन्यान्य अवतारोंकी करुणाकी अपेक्षा श्रीगौरावतारकी करुणाका एक अपूर्व वैशिष्ट्य है। इस सम्बन्धमें नीचे कुछ विचार प्रदर्शित किये जा रहे हैं—

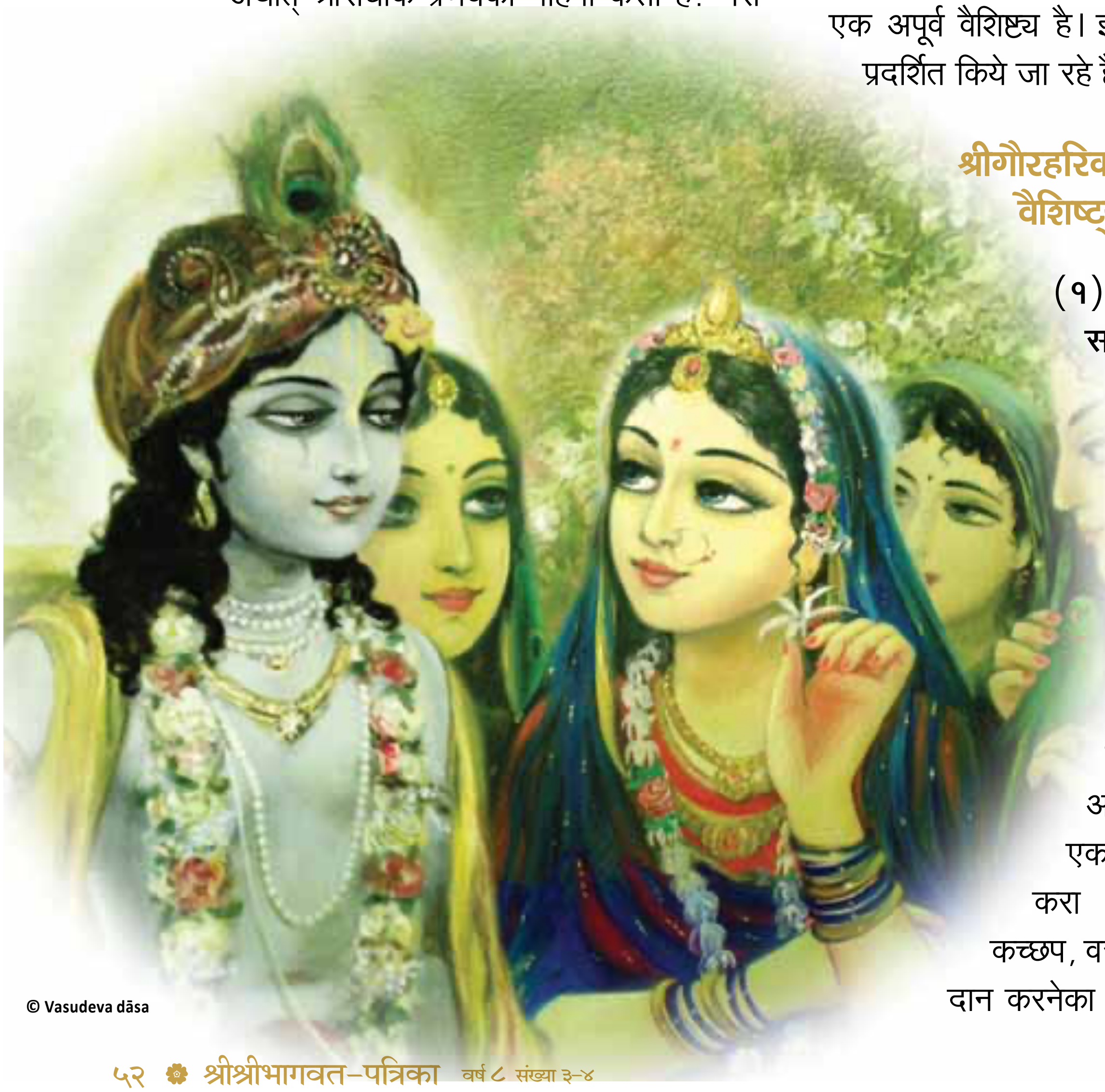

© Vasudeva dāsa

श्रीगौरहरिकी करुणाके आठ अभूतपूर्व वैशिष्ट्य

(१) केवल श्रीगौरहरि द्वारा ही सभीको भक्ति प्रदान

पहले कहा गया है कि साधुजनोंकी रक्षा और असाधुजनोंका विनाश करके धर्म–संस्थापनके लिये श्रीभगवान्‌ने असंख्य अवतार ग्रहण किये हैं। उनमेंसे वेदादि–शास्त्र एवं उनके सारभूत श्रीमद्भागवतके अनुसार अपार एवं अगाध समुद्र जिनके एक रोमको भी सर्वथा स्नान नहीं करा सके—ऐसे प्रतिभाशाली मीन, कच्छप, वराह आदि अवतारोंके द्वारा भक्ति दान करनेका कोई प्रश्न ही नहीं उठ सकता।

श्रीनृसिंह, वामन, परशुराम आदि अवतार अपने मुख्य प्रयोजन तक ही सीमित रहे। कपिल, दत्तात्रेय आदि अवतार भी सांख्य, योगादिके उपदेष्टा ही रहे। अन्यान्य बुद्धादि अवतारोंमें भी भक्ति–दान करनेका कोई प्रसङ्ग नहीं

© Rangapuri dāsa

पाया जाता। केवलमात्र श्रीरामचन्द्र और श्रीकृष्णचन्द्रने ही जीवोंको आकृष्ट किया है; किन्तु भक्ति–दानके विषयमें उन्होंने निजजनोंके प्रति भी उदारताका विशेष परिचय नहीं दिया।

श्रीरामचन्द्रने श्रीलोमश ऋषि, शरभङ्ग, सुतीक्ष्ण, दण्डकारण्यके ऋषिगण, यहाँतक कि अपने निजजन काकभुषण्डीको भी भक्ति गोपन करके भोग–मोक्षका वर देनेका प्रस्ताव रखा था।[१] श्रीरामचन्द्र मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, अतः यह कहा जा सकता है कि भक्ति देनेपर मर्यादाका व्यतिक्रम न हो, इसीलिये उनके पक्षमें भक्तिको गोपन रखना उचित था। ऐसा होनेपर भी बाह्यतः कुछ सीमातक मर्यादाका उल्लंघन करनेवाले लीला–पुरुषोत्तम श्रीकृष्णका भक्ति–दानके विषयमें उदार होना अवश्य ही उचित था, किन्तु उन्होंने भी स्वभक्तिको गोपन करके ही रखा।

राजन् पतिर्गुरुरलं भवतां यदुनां,
दैवं प्रियः कुलपतिः क्व च किङ्करो वः।
अस्तेवमङ्ग भगवान् भजतां मुकुन्दो,
मुक्तिं ददाति कर्हिचित् स्म न भक्तियोगम्॥

(श्रीमद्भा॰ ५/६/१८)

अर्थात् हे राजन्! यह सत्य है कि भगवान् मुकुन्द आपके एवं यादवोंके पति, गुरु, उपास्य, प्रिय, स्वामी एवं कभी–कभी सेवक भी हुए हैं, तथापि वही भगवान् श्रीकृष्ण अपने भजन करनेवालोंको मुक्ति सहजरूपमें दे देते हैं, किन्तु भक्ति सहजरूपमें नहीं देते।

कृष्ण यदि छुटे भक्ते भुक्ति–मुक्ति दिया।
कभु प्रेमभक्ति ना देन राखेन लुकाइया॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत आदि ८/१८)

अर्थात् भक्त यदि भुक्ति या मुक्ति चाहता है, तो श्रीकृष्ण उन्हें तुरन्त प्रदान कर देते हैं। किन्तु प्रेमभक्तिको कभी नहीं देकर उसे छिपाकर रखते हैं।

---

१ श्रीरामचन्द्रजीके इन परिकरोंकी भोग–मोक्षमें रुचि ही नहीं थी, अतएव उन्होंने भोग–मोक्ष स्वीकार नहीं किया। किन्तु ऐसी लीलाओंके द्वारा भगवान्ने अपने निजजनकी श्रेष्ठ वृत्तिको प्रदर्शित किया है।

(२) श्रीगौरहरि योग्यता विचार किए बिना प्रेम प्रदान करनेवाले

इस प्रकार 'कर्त्तुमकर्त्तुमन्यथाकर्त्तुम् प्रभु' [अर्थात् असम्भवको सम्भव करने, सम्भवको असम्भव करने तथा अन्यथा करनेमें समर्थ भगवान्] अपने सभी स्वरूपोंमें अपना भजन करनेवाले व्यक्तिके निकट भी भक्तिको गोपन करके रखते हैं। परन्तु श्रीगौराङ्ग–स्वरूपमें अपने उपदेश, स्पर्श, दृष्टि एवं प्रेरणा आदिके द्वारा सभी जीवोंको भक्तिरसमें आप्लावित करनेके लिये ही सन्यास ग्रहण करके उन्होंने श्रीचैतन्य–महाप्रभुके रूपमें देश–विदेशमें भ्रमण करके, अपने परिकरोंको सर्वत्र भेजकर, श्रीविग्रह और भक्तिग्रन्थोंको प्रकाशित करवाकर हरिनाम–प्रेमको दोनों हाथोंसे वितरण किया।

श्रील रूप गोस्वामीने कहा है—

सन्त्ववतारा बहवः पङ्कजनाभस्य सर्वतोभद्राः।
कृष्णादन्यः को वा लतास्वपि प्रेमदो भवति॥

(लघुभागवतामृतम् पूर्वखण्ड ३०३)

अर्थात् भगवान् पङ्कजनाभके अनेक मङ्गलमय अवतार क्यों न हों, किन्तु श्रीकृष्णके अतिरिक्त लता अर्थात् आश्रितजनोंको प्रेमदान करनेवाला और कौन है?

यह सत्य है, किन्तु **'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्'** (श्रीगी॰ ४/११) [अर्थात् हे पार्थ! जो मनुष्य जिस प्रकार मेरा भजन करते हैं, मैं भी उनका उसी प्रकार भजन करता हूँ।] गीताकी इस उक्तिके अनुसार श्रीकृष्ण श्रद्धा एवं अधिकारको तराजुमें तोल करके ही भक्ति प्रदान करते हैं। जिनकी जितनी शरणागति अथवा श्रद्धा है, उनको उसी परिमाणमें ही भक्ति देते हैं। कम भी नहीं और अधिक भी नहीं, ठीकसे तोलकर ही दान करते हैं। श्रीकृष्णनाम (प्रभु) भी परम उदार, दयालु हैं एवं उन्होंने भूत, भविष्य और वर्त्तमानमें सङ्केत, परिहास, स्तोभ एवं अवहेलनाके द्वारा नामाभासकारीका उद्धार किया है, कर रहे हैं और करेंगे, यह भी सत्य है।

परन्तु—

कृष्णनाम करे अपराधेर विचार।
'कृष्ण' बलिले अपराधीर ना हय विकार॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत आदि ८/२४)

अर्थात् 'कृष्णनाम' अपराधका विचार किया करता है। 'कृष्ण' बोलनेपर भी अपराधीमें प्रेमका विकार नहीं होता।

किन्तु—

चैतन्य–नित्यानन्दे नाहि ए–सब विचार।
नाम लैते प्रेम देन, बहे अश्रुधार॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत आदि ८/३१)

अर्थात् श्रीचैतन्य महाप्रभु और श्रीनित्यानन्द प्रभुके नामोंमें ऐसा कोई विचार नहीं है। उनके नाम लेनेके साथ–साथ उनका नाम प्रेम प्रदान करता है और बाह्य लक्षण स्वरूप निरन्तर अश्रुधारा प्रवाहित होती है।

केवल इतना ही नहीं—

एमन कृपालु नाहि शुनि त्रिभुवने।
कृष्णप्रेमा हय जाँर दूर दरशने॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत मध्य १६/१२१)

अर्थात् मैंने ऐसे कृपालुजनोंके विषयमें इस त्रिभुवनमें भी कभी नहीं सुना है। जिन (श्रीमन्महाप्रभु) के दूरसे दर्शन करनेमात्रसे ही देखनेवालोंमें कृष्णप्रेम आविर्भूत हो जाता है।

(३) श्रीगौरहरिका अपनी करुणाशक्तिके प्रति आत्मसमर्पण

श्रीमन्महाप्रभुकी करुणाने पात्रापात्रका विचार न करके जो सामने आया, उसे ही पात्र जानकर प्रेमदान कर दिया। जिनके पास पात्र नहीं था, जो खाली हाथ आये थे, उन्हें स्वयं पात्र प्रदान करके उनके पात्रको प्रेमामृतसे भर दिया। जो उन्नतोज्ज्वल स्वभक्तिरूप प्रेमामृत श्रीनारद आदि प्रेष्ठजनोंके लिये भी सुदुर्लभ है—**'यत् प्रेष्ठैरप्यलमसुलभं किं पुनर्भक्तिभाजां'** (उपदेशामृतम् ११) [अर्थात् साधक भक्तोंकी तो बात ही क्या है? क्योंकि जो गोपी—प्रेम श्रीनारद जैसे भगवान्‌के अतिशय प्रिय भक्तोंके लिए भी अत्यन्त दुर्लभ है।] श्रीगौरकरुणाने अबाधगति अर्थात् बिना किसी रोक—टोकके अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षा करते हुए प्रसारित होकर प्रबल बाढ़के समान समस्त जगतको उसी दुर्लभ प्रेमामृतमें आप्लावित कर दिया। श्रीमन्महाप्रभुने अपनी असमोर्ध्व करुणाको मुक्त कर दिया। श्रीगौरहरिने अपनी करुणा शक्तिसे कह दिया—"करुणा! मैंने तुम्हारे निकट आत्मसमर्पण कर दिया है। तुम जिस दिशामें जितनी दूर जाना चाहती हो, [जाओ और वहाँ जाकर] अपराधी, विमुख, तटस्थ, श्रद्धालु, अश्रद्धालु, साधारण भक्त और विशेष भक्त सभीको प्रेमकी बाढ़में डुबो दो।"

इस प्रेमकी बाढ़में सर्वप्रथम कुलियाके निन्दुक विद्यार्थीवर्ग, नीलाचलके सार्वभौम भट्टाचार्य आदि अद्वैतवादिगण एवं अन्तमें काशीके अपराधी अद्वैतवादी प्रकाशानन्द सरस्वती एवं उसके साठ हजार सन्यासी शिष्य भी डूब गए। श्रीगौरकरुणाका ऐसा अपूर्व माधुर्य, अद्भुत उल्लास, अनुपम औदार्य एवं असमोर्ध्व वैशिष्ट्य प्रेम—प्रदाता लीला—पुरुषोत्तम श्रीकृष्णमें भी दृष्टिगोचर नहीं होता।

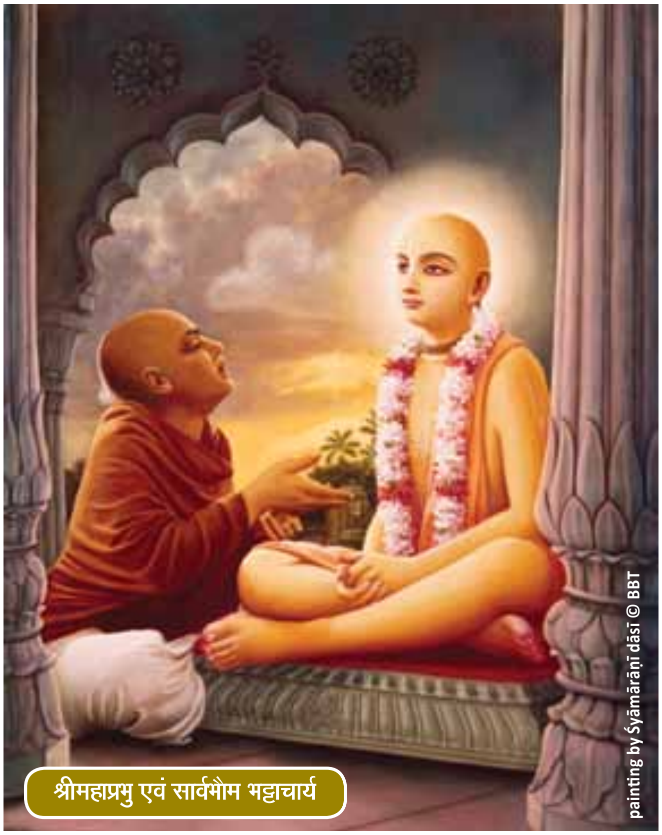

श्रीमहाप्रभु एवं सार्वभौम भट्टाचार्य

painting by Śyāmarāṇī dāsī © BBT

श्रीमहाप्रभु एवं सशिष्य प्रकाशानन्द सरस्वती

painting by Śyāmarāṇī dāsī © BBT

(४) केवल परम (स्वयं) भगवान् ही अन्यान्य भगवत् स्वरूपोंको प्रकाशित करनेमें समर्थ

अन्यान्य भगवद्–स्वरूप जगतमें अवतीर्ण होकर आदिसे अन्ततक अपने उसी एक स्वरूपका ही दर्शन कराते हैं। केवल श्रीकृष्ण अवतारमें भगवान्ने देवकी–वसुदेव और गोपियोंको चतुर्भुज मूर्त्ति, अर्जुनको विश्वरूप, द्वारकामें हनुमानको रामरूपमें दर्शन दिया था। वे स्वयं भगवान् हैं, उनके लिये यह सम्भव है। किन्तु मीन, कूर्म, वराह, नृसिंह एवं श्रीरामादिने स्वयंसे भिन्न अन्य किसी भगवद्–स्वरूपका दर्शन नहीं कराया। किन्तु श्रीचैतन्य महाप्रभुने जिस भक्तके जो इष्टदेव थे, उन भक्तोंको उसी (इष्ट) रूपमें सबके सामने ही दर्शन दिया था। श्रीवास, श्रीनृसिंहानन्दको श्रीनृसिंह रूपमें, मुरारिगुप्तको सपरिकर श्रीरामरूपमें, किसीको यज्ञ–वराह, किसीको चतुर्भुज, षड्भुज, अष्टभुज, किसीको मुरलीधारी कृष्ण एवं श्रीरायरामानन्दको श्रीराधाभावद्युति सुवलित रसराज महाभाव रूपके दर्शन कराये थे। इससे उनकी स्वयं भगवत्ताके साथ–साथ समस्त भगवद्–स्वरूपोंमें श्रेष्ठता भी प्रतिपादित होती है।

(५) श्रीगौरहरिकी करुणाका पूर्णरूपसे प्रस्फुटित होना

अन्यान्य अवतारोंमें भगवानने साधुओंका परित्राण किया है एवं साधुजनोंने भी भगवान्‌की इस करुणाका प्रत्यक्ष रूपमें अनुभव किया है। धर्म–स्थापन करके भगवानने धर्मप्राण सज्जनगणोंका उपकार किया है तथा उन उपकृत सज्जनोंने भी उस करुणाका अनुभव किया है। अन्यान्य अवतारोंमें भगवानने असुरोंका विनाश करके उन्हें गति प्रदान की है, इस कारण वे 'हतारिगतिदायक' (अपने द्वारा मारे जानेवालेको उत्तमगति प्रदान करनेवाले) हैं। श्रीकृष्णने जिन समस्त असुरोंका वध किया, उन्होंने उन्हें मुक्ति प्रदान की। यहाँतक कि अपने भक्त अर्जुन और भीमके द्वारा मारे गये व्यक्तियोंको भी उन्होंने मुक्ति प्रदान की है। असुरोंके प्रति भगवान्‌की करुणाका यह एक विचित्र निदर्शन है। पूतनाको उन्होंने धात्री–उचित गति प्रदान की। किन्तु भगवान्‌की ऐसी करुणाका असुरोंने कब अनुभव किया? मृत्युके पश्चात् भगवच्चरणोंमें स्थान प्राप्त करनेके बाद। जबतक वे जीवित थे, तबतक वे भगवान्‌की करुणाका अनुभव नहीं कर पाये। उनके बन्धु–बान्धव–पुत्र–पत्नी आदि कोई भी (केवल कालीय और उसकी पत्नियोंको छोड़कर) उस करुणाका अनुभव नहीं कर पाये। किन्तु अन्तिम निश्वास परित्याग करनेतक उनकी यह निश्चित धारणा थी कि श्रीकृष्ण उनके साथ निष्ठुर व्यवहार करते थे। अतएव अन्यान्य अवतारोंमें करुणाके माधुर्यका विकास असम्पूर्ण रहा है।

श्रीचैतन्य महाप्रभुने किसी प्रकारका अस्त्र–शस्त्र धारण नहीं किया। किसीके प्राणोंका भी विनाश नहीं किया, सभी को हरिनाम प्रदान करके उनका चित्त शुद्ध कर दिया। असुर संहार नहीं—असुरत्व (असुर वृत्तिके) संहारका वैशिष्ट्य केवलमात्र श्रीगौरावतारमें ही परिलक्षित होता है। ''राम आदि अवतारे, क्रोधे नाना अस्त्र धरे। एबे अस्त्र ना धरिल, प्राणे कारो ना मारिल, चित्तशुद्ध करिल सबार॥'' [अर्थात् रामादि अवतारोंमें भगवान्‌ने क्रोधपूर्वक विभिन्न अस्त्र धारणकर असुरोंका संहार किया। किन्तु अब अर्थात् भगवान् श्रीचैतन्य अवतारमें उन्होंने कोई

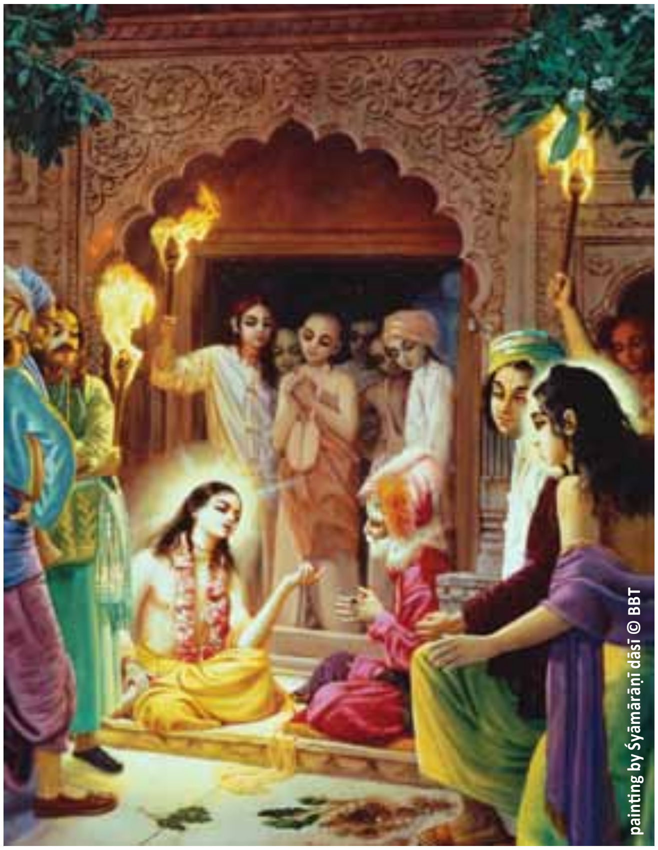

अस्त्र धारण नहीं किया और न ही किसीके प्राणोंका हरण किया, बल्कि सबके चित्तको शुद्ध कर दिया।] इसका उदाहरण जगाई–माधाई, चाँद काज़ी, निन्दुक विद्यार्थीगण, काशीवासी निर्विशेषवादी प्रकाशानन्द सरस्वती और उसके शिष्यवर्ग हैं। ये सब विष्णु–वैष्णव विरोधी, महा–महा अपराधी होनेपर भी श्रीचैतन्य महाप्रभुकी करुणासे परमभागवत होकर स्त्री, पुत्र, परिवार और शिष्य–प्रशिष्यों सहित अपने जीवितकालमें ही श्रीगौरहरिकी असमोर्द्ध करुणा–माधुर्यका अनुभव और आस्वादनकर कृतकृतार्थ हुए थे।

(६) जीवके उद्धारके लिए श्रीगौरहरिकी विशेष व्याकुलता

श्रीचैतन्य महाप्रभु जब अपने समस्त परिकरोंसे मिलते थे, तो उनसे पूछते थे—जीवोंका उद्धार किस प्रकार होगा? पशु–पक्षी, तृण–लता–गुल्मादि और स्थावर जीवोंका निस्तार कैसे होगा? श्रीनित्यानन्द,

श्रीअद्वैत और श्रीहरिदास ठाकुर आदि परिकरगण कहते थे कि आपने जिस उच्च–सङ्कीर्त्तनका प्रचार किया है, उसीसे स्थावर, जङ्गम आदि समस्त प्राणियोंका अवश्य ही उद्धार होगा। नाम–ध्वनिसे संयुक्त वायुके स्पर्शमात्रसे ही सभीका निस्तार अवश्यम्भावी है। वस्तुतः उच्च श्रीनाम–सङ्कीर्त्तनके प्रचलनके द्वारा करुणाका असमोर्ध्व विकास जिस प्रकार श्रीगौरावतारमें हुआ है एवं उस अवतारमें जीव निस्तारकी जैसी उत्कण्ठामयी भावना निहित है, वह अन्यत्र कहीं नहीं देखी जाती। अन्य किसी भगवद्–स्वरूपने स्वयं भक्तिके आचार–प्रचारकी शिक्षा जीवजगतको प्रदान नहीं की।

(७) श्रीगौरहरि—रसिकशेखर और परमकरुण

श्रीचैतन्यचरितामृत (आदि ४/१६) में देखा जाता है—**'रसिकशेखर कृष्ण परम करुण'** [अर्थात् रसिकशेखर श्रीकृष्ण परम करुण हैं]। किन्तु विचार करनेपर देखा जाता है कि कृष्ण रसिक एवं करुण हैं, यह सत्य है, किन्तु वे तबतक रसिकशेखर एवं परम करुण नहीं हैं, जबतक वे राधाभाव एवं कान्ति अङ्गीकार करके महाप्रभुके रूपमें अवतीर्ण नहीं हुए। इसका कारण है कि श्रीकृष्णलीलामें उनकी तीन इच्छाएँ अपूर्ण रह गयी थीं, जिनका आस्वादन उन्होंने श्रीगौरलीलामें किया। श्रीकृष्णने गोपियोंका माखन एवं मन आदि चोरी किया था, किन्तु वे श्रीमती राधिकाकी अङ्गकान्ति एवं स्वरूपगत अधिरूढ़ मादन, मोदन एवं मोहन भाव चोरी नहीं कर पाये। इसीलिये श्रील रायरामानन्दने कहा है—**'राधाभावद्युति सुवलितं नौमि कृष्ण स्वरूपम्'** (श्रीचैतन्यचरितामृत आदि १/५) [अर्थात् श्रीमती राधाजीके भाव और कान्तिसे सुवलित श्रीकृष्ण स्वरूप श्रीचैतन्यमहाप्रभुको मैं नमन करता हूँ।] श्रीकृष्ण असुरोंको मुक्ति प्रदान करके पृथ्वीका भार हरण करनेके कारण 'करुण' हैं; किन्तु श्रीमन्महाप्रभु अपराधियोंको भी ब्रह्मादिके लिये भी दुर्लभ प्रेमको मुक्तहस्तसे वितरणकर 'परम करुण' के रूपमें विख्यात हुए हैं।

(८) श्रीगौरलीलाकी चमत्कारिक विशेषता

श्रीमन्महाप्रभुकी करुणाका और एक वैशिष्ट्य यह है कि जो गौर नाम लेते हैं, उनमें कृष्णप्रेम उदित होता है। जो गौराङ्गका आश्रय ग्रहण करते हैं, वे सपरिकर व्रजेन्द्रनन्दनको प्राप्त करते हैं। जो गौड़मण्डल भूमिका आश्रय ग्रहण करते हैं, उन्हें व्रजभूमिमें नित्य वास प्राप्त होता है। अहो! जो गौरप्रेमरूपी रसके सागरमें निमग्न होते हैं, वे राधा–माधवके प्रेमकी तरङ्गोंमें तैरते हैं—

जे गौरांगेर नाम लय, ता'र हय प्रेमोदय,
ता'रे मुञि जाइ बलिहारि।
गौराङ्गेर सङ्गीगणे, नित्यसिद्ध करि' माने,
से जाय ब्रजेन्द्रसुत–पाश।
श्रीगौड़मण्डल–भूमि, जेबा जाने चिन्तामणि,
ता'र हय व्रजभूमे वास॥
गौर प्रेम रसार्णवे, से तरङ्गे जेबा डुबे,
से राधा–माधव अन्तरंग।

(श्रीलनरोत्तम दास ठाकुर, प्रार्थना ३९)

अर्थात् जो श्रीगौराङ्ग महाप्रभुका नाम लेते हैं, उनके हृदयमें प्रेम उदित हो जाता है, मैं ऐसे प्रेमीजनोंके बलिहारी जाता हूँ। जो श्रीगौराङ्ग महाप्रभुके परिकरोंको नित्यसिद्ध मानते हैं, वे व्रजेन्द्रनन्दनका सान्निध्य प्राप्त करते हैं। तथा जो गौड़मण्डल–भूमिको चिन्तामणि (अप्राकृत) मानते हैं, उनका ही व्रजभूमिमें वास होता है। जो गौर–प्रेमरसरूपी सागरकी तरंगोंमें डूबते हैं, वे ही राधामाधवके अन्तरंग होते हैं।

गौड़–व्रज–जने, भेद ना देखिब
हइब बरज वासी।
धामेर स्वरूप, स्फुरिबे नयने
हइब राधार दासी॥

(श्रीलभक्तिविनोद ठाकुर, प्रार्थना ३९)

अर्थात् यदि मैं गौड़मण्डलवासियों और व्रजवासियोंमें भेद नहीं देखूँगा, तभी मैं व्रजवासी हो पाऊँगा। तभी धामका स्वरूप मेरे नेत्रोंके समक्ष स्फुरित होगा और मैं श्रीमती राधारानीकी दासी हो पाऊँगा।

कितनी अद्भुत बात है! डूबे हिन्द–महासागरमें और निकलें प्रशान्त महासागरसे। डूबे गौरप्रेमरूपी सागरमें और निकलें राधा–कृष्णरूपी प्रेमसागरसे। आश्रय किया गौर–परिकरगणोंका और दासी हो गये श्रीमती राधिकाकी। यह श्रीगौरलीलाका एक अद्भुत वैशिष्ट्य है।

श्रीचैतन्यमहाप्रभुका परमदिव्य दान–परकीया-भाव

साध्य–साधन अथवा उपासनाके क्षेत्रमें भी श्रीचैतन्य महाप्रभुके अवदानका वैशिष्ट्य और भी चमत्कृत कर देनेवाला एवं अतुलनीय है।

परकीया भावका (इङ्गित) श्रीकृष्णकर्णामृत, श्रीमद्भागवतके श्रीरासपञ्चाध्याय, मुक्ताफलमें, श्रीचण्डीदास और विद्यापतिकी पदावलियोंमें स्पष्ट रूपसे वर्णन होनेपर भी श्रीचैतन्य महाप्रभुसे पहले किसी भी वैष्णवाचार्यने साध्य–साधनके विषयमें परकीया–भावका उपदेश स्पष्ट रूपसे नहीं दिया। श्रीमन्महाप्रभुके एकान्त अनुगत एवं उनके मनोऽभीष्टको पूर्ण करनेवाले श्रील सनातन गोस्वामी, श्रील रूप गोस्वामी, श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी आदिने स्वरचित श्रीबृहदभागवतामृत, श्रीउज्ज्वलनीलमणि, श्रीचैतन्यचरितामृत आदि प्रामाणिक ग्रन्थोंमें परकीया–भावको ही साध्य–साधनके विषयमें चरम सिद्धान्तके रूपमें स्थापित किया है।

श्रीचैतन्यचरितामृतमें इस प्रकार कहा गया है—

परकीय–भावे अति रसेर उल्लास।
ब्रज बिना इहार अन्यत्र नाहि वास॥
ब्रजवधूगणेर एइ भाव निरवधि।
तार मध्ये श्रीराधार भावेर अवधि॥
प्रौढ़निर्मलभाव प्रेम सर्वोत्तम।
कृष्णेर माधुर्यरस आस्वादन कारण॥

(श्रीचैतन्यचरितामृत आदि ४/४७–४९)

अर्थात् परकीया भावमें रसका अत्यन्त उल्लास होता है और व्रजके अतिरिक्त अन्यत्र कहीं भी इसका वास (स्थिति) नहीं है। व्रजवधुओंमें यह भाव निरन्तर विद्यमान रहता है और उनमेंसे भी श्रीराधामें तो इस भावकी चरमसीमा विराजित है। (श्रीराधाजीका) परिपक्व निर्मलभाव ही सर्वोत्तम प्रेम है और यही प्रेम श्रीकृष्णके द्वारा माधुर्यरसके आस्वादनका कारण है।

पदकर्त्ता श्रीप्रेमानन्दने भी उल्लासमें भरकर गान किया है—

एमन शचीर नन्दन बिने।
'प्रेम' बलि नाम, अति अद्भुत,
श्रुत हइत का'र काने?

अहो! ऐसे श्रीशचीनन्दन गौरसुन्दरकी करुणाके बिना अति अद्भुत 'प्रेम' नामक शब्द कौन सुन पाता?

श्रीकृष्ण नामेर, स्वगुण महिमा,
केबा जानाइत आर?
वृन्दा विपिनेर महा मधुरिमा,
प्रवेश हइत का'र?

श्रीकृष्ण नामकी अद्भुत गुण—महिमा और कौन हमें बतलाता? यदि राधाभाव सुवलित श्रीकृष्णस्वरूप श्रीशचीनन्दन गौरहरि इस जगतमें प्रकट होकर श्रीवृन्दावनकी महामधुरिमाका प्रकाश नहीं करते, पात्र एवं अपात्रका विचार किये बिना कलियुगी जीवोंके प्रति अहैतुकी कृपापूर्वक उन्हें व्रजकी माधुरीमें प्रवेशका सौभाग्य प्रदान नहीं करते, तो श्रीवृन्दावनकी इस महामधुरिमामें किसका प्रवेश होता?

केवा जानाइत, राधार माधुर्य,
रस—यश चमत्कार?
ता'र अनुभाव, सात्त्विक विकार,
गोचर छिल वा का'र?

कौन श्रीमती राधिकाके माधुर्य तथा रस और यशके चमत्कारके विषयमें बतलाता? अर्थात् उनके चमत्कारपूर्ण

महाभावके अधिरूढ़, मोदन, मादन आदि अलौकिक भावोंको इस धरा धाममें रसिकशेखर श्रीशचीनन्दन गौरहरिके बिना अन्य कौन प्रकाशित करता? श्रीशचीनन्दन गौरहरिकी कृपाके बिना उन श्रीमती राधिकाके अनुभाव और सात्त्विक विकार आदि किसके दृष्टिगोचर थे।

व्रजे जे विलास, रास महारास,
प्रेम परकीय तत्त्व।
गोपीर महिमा, व्यभिचारि सीमा,
का'र अवगति छिल एत?

गौरहरिकी कृपाके बिना व्रजके अप्राकृत विलास, मधुर वृन्दावनमें अखिलरसामृत मूर्ति श्रीकृष्ण तथा महाभावकी मूर्तिमान विग्रह श्रीमती राधिका और उनकी कायव्यूहस्वरूप गोपियोंके साथ

रास–महारास, परकीय प्रेमका तत्त्वको जानना किसके लिए सम्भव था? श्रीगौरहरिकी कृपाके बिना गोपियोंकी महिमा तथा उनके प्रेमकी व्यभिचारी सीमा इत्यादिके विषयमें कौन जान सकता था?

धन्य कलि धन्य, निताई–चैतन्य,
परम करुणा करि'।
विधि अगोचर, जे प्रेम–विकार,
प्रकाशे जगत् भरि॥

अहो! यह कलियुग अतिधन्य है, जिसमें परम करुणापूर्वक श्रीनित्यानन्द प्रभु एवं श्रीचैतन्यमहाप्रभुने अवतरित होकर उस प्रेम–विकारको सम्पूर्ण जगत्‌में प्रकाशित किया, जिसका दर्शन ब्रह्माजीके लिये भी सम्भवपर नहीं है।

उत्तम अधम, किछु ना बाछिल,
याचिया दिलेक कोल।
कहे प्रेमानन्दे, एमन–गौरांगे,
अन्तरे धरिया दोल॥

इस प्रेम–प्राप्तिसे उत्तम अथवा अधम कोई भी नहीं बचा, उनके इच्छा करनेमात्रसे ही श्रीशचीनन्दनने उन्हें अपने हृदयसे लगा लिया। पदकर्त्ता श्रीप्रेमानन्द कहते हैं–अरे भाइयो! ऐसे श्रीगौराङ्ग महाप्रभुको अपने हृदयमें धारणकर विचरण करो।

इस प्रकार स्वरूप प्रकाशमें, पतित–पावनताके विषयमें, आत्मदानसे भावी जीवोंके उद्धार करनेमें, जीवोंके स्वरूपगत परमधर्म (सेवा–वृत्ति) अथवा अकैतव धर्मके प्रचारमें, कृष्णप्रेमकी पूर्णतम सीमातक स्वरूपके

प्रकाशमें, नाम–प्रेम वितरणमें एवं सर्वोपरि श्रीकृष्णके अनुपम माधुर्यके रसास्वादनमें श्रीगौर–करुणाका जो महामाधुर्यमय और उल्लासमय विकास वैशिष्ट्य है, वह सर्वथा अनिर्वचनीय और अतुलनीय है। वह किसी युगमें अथवा किसी भगवद्–स्वरूपमें अभिव्यक्त नहीं हुआ है।

अतएव,

हे साधव! सकलमेव विहाय दूरात चैतन्यचन्द्र चरणे कुरुतानुरागम्।

(श्रीचैतन्यचन्द्रमृतम् १२०)

हे साधुजनो! सब कुछ दूरसे परित्याग करके ऐसे श्रीचैतन्यचन्द्रके चरणोंमें अनुराग उत्पन्न करें।

[श्रीगौड़ीय पत्रिका वर्ष–३८, संख्या–५–७ से अनुवादित]

श्रीश्रीभागवत पत्रिकाकी नयी Website:
www.bhagavatpatrika.com

श्रीश्रीगुरु–गौराङ्गकी कृपासे अब online में भी श्रीश्रीभागवत पत्रिका www.bhagavatpatrika.com नामक website पर उपलब्ध है। इस नयी website द्वारा श्रीश्रीभागवत पत्रिकाके कुछेक पुराने अंक एवं नयी संख्याओंके अंश download किये जा सकते हैं। साथ ही इस वर्षकी व्रत–तालिका भी download की जा सकती है। मुख्यत: अब इस website द्वारा श्रीश्रीभागवत पत्रिकाके नये सदस्य बनने या सदस्यता नवीकरण करानेके लिए सुविधा भारतीय तथा अन्तराष्ट्रीय भक्तोंके लिए उपलब्ध करायी गयी है।

विशेष ज्ञातव्य

श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके पाठकों और सदस्योंको सूचित किया जाता है कि श्रीपत्रिका इस सम्पूर्ण आठवें वर्ष श्रील गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीभक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके विरह–विशेषांकके रूपमें प्रकाशित होगी। अत: इस वर्ष पत्रिकाकी दो–दो संख्याएँ एक साथ दो–दो महीनोंमें एक बार प्रकाशित होंगी।

श्रील गुरुदेवके प्रति अपनी कृतज्ञताका स्मरण करते हुए श्रील गुरुदेवके चरणाश्रित (१) श्रीमती सपना रमेश खण्डेलवाल (मुम्बई) तथा उनकी पुत्री (२) श्रीमती बरखा मयंक रावत (सिंगापुर) ने इस विरह–विशेषाङ्कके प्रकाशन हेतु आर्थिक योगदानके द्वारा विशेष सेवा–सौभाग्यको वरण किया है। इनकी विशेष सेवाके लिये श्रील गुरुदेव अपने नित्यधामसे इन पर विशेष कृपा वर्षित करें—यही श्रील गुरुदेवके अभय चरणकमलोंमें विनम्र प्रार्थना है।

'श्रीश्रीभागवत पत्रिका' का सम्पादक एवं कार्यकारी मण्डल

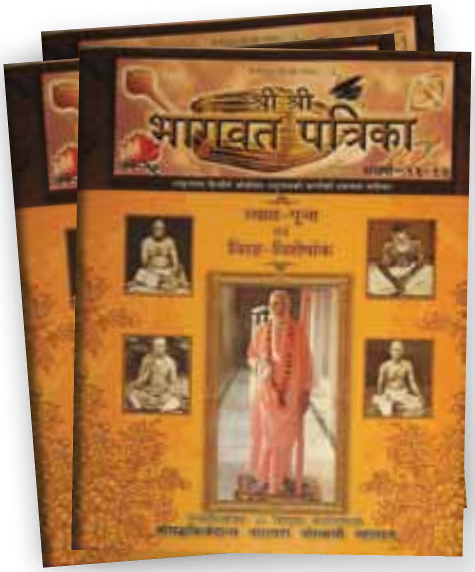

श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके ग्राहकोंसे वार्षिक सदस्यता–शुल्क भुगतानके लिए निवेदन

आदरणीय श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके ग्राहको!

आपसे पुनः यह निवेदन किया जा रहा है कि आपमेंसे जिन्होंने अभी तक इस वर्षका देय वार्षिक शुल्क भुगतान नहीं किया है, वह शीघ्र–अतिशीघ्र इस वार्षिक शुल्कका भुगतानकर पत्रिकाके माध्यमसे श्रीवैकुण्ठ–वार्त्तावहको नियमित रूपसे प्राप्त करनेके सौभाग्यका वरण करें।

श्रीश्रीभागवत–पत्रिकाके इस अष्टम वर्षमें समस्त अंक विरह–विशेषांक हेतु रंगीन और सचित्र प्रकाशित होंगे, अतः केवल इस अष्टम वर्षके लिए ही वार्षिक शुल्क भारतीय सदस्योंके लिए ३०० रुपये तथा विदेशी सदस्योंके लिए ३० अमेरिकन डालर किया गया है। हम अपने सभी सहृदय पाठक–भक्तोंसे इस विषयमें सहयोगकी आशा करते हैं।

इस वर्षसे सदस्यवृन्द निम्न प्रकारसे सहजरूपमें शुल्क भुगतान कर सकते हैं:

भारतीय सदस्योंके लिए

नये सदस्योंके लिए

कृपया www.bhagavatpatrika.com वैबसाइटपर जायें और वहाँ दिये गये Instructions के अनुसार सदस्य बनें।

सदस्यता नवीकरणके लिए

(१) Bank to bank NEFT transfer

Account name: SRI BHAGVAT PATRIKA SRI GOUDIYA
Account no. : 037201000010611
IFSC code: IOBA0000372
Bank: Indian Overseas bank

८७९१२७३३०६ phone number पर अपनी ग्राहक संख्या या अपना नाम और सदस्य शुल्कके साथ एक SMS भेजें।

अथवा

mathuramath@gmail.com में अपनी ग्राहक संख्या या अपना नाम और सदस्य शुल्कके साथ एक email भेजें।

(२) Demand draft or Cheque (account payee) payable to:

"SRI BHAGVAT PATRIKA SRI GOUDIYA"

श्रीश्रीभागवत–पत्रिका कार्यालय,
श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, जवाहर हाट, मथुरा, उ.प्र. २८१००१ के पतापर Demand draft or Cheque भेजें।

(३) Money order

श्रीश्रीभागवत–पत्रिका कार्यालय,
श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, जवाहर हाट, मथुरा, उ.प्र. २८१००१ के नामपर भेजें।

विदेशी सदस्योंके लिए

नये सदस्य तथा सदस्यता नवीकरणके लिए

कृपया www.bhagavatpatrika.com वैबसाइटपर जायें और वहाँ दिये गये instructions के अनुसार नये सदस्य बनें या अपनी सदस्यताका नवीकरण करें।

विदेशी सदस्योंके लिए इस वर्षसे "Paypal" द्वारा भुगतान करनेकी सुविधा उपलब्ध करायी गयी है। अधिक जानकारीके लिए www.bhagavatpatrika.com वैबसाइट देखें।

नारायण प्रभुं वन्दे करुणाघन-विग्रहम्।
रागमार्ग-भक्तिं दत्वा तारयति त्रिभुवनम्॥ १॥

मैं करुणाघनके विग्रह उन प्रभु श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीकी वन्दना करता हूँ जिन्होंने रागमार्ग-भक्तिका दानकर त्रिभुवनका उद्धार किया है।

सेवाकुञ्जे व्रजेरम्ये गोवर्धनगिरौ सदा,
राधाकुण्डे रसानन्दे तत्तत्सेवाप्रदायकम्।
गुरुं नारायणाख्यं तं वन्दे रमणप्रेष्ठकं,
यत्पादसंस्मृतिमात्रेण दामोदर प्रसीदति॥ २॥

मैं रमणीय व्रजमें स्थित श्रीसेवाकुञ्जमें, श्रीगिरिराज गोवर्धनमें तथा रसानन्दसे परिपूर्ण श्रीराधाकुण्डमें सदा उन उन स्थानोंके अनुरूप सेवाएँ प्रदान करनेवाले, श्रीरमणबिहारीजीके अत्यन्त प्रिय, उन श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज नामक श्रीगुरुकी वन्दना करता हूँ, जिनके श्रीचरणकमलोंके स्मरण करनेमात्रसे ही श्रीराधादामोदर प्रसन्न होकर कृपावर्षण करते हैं।

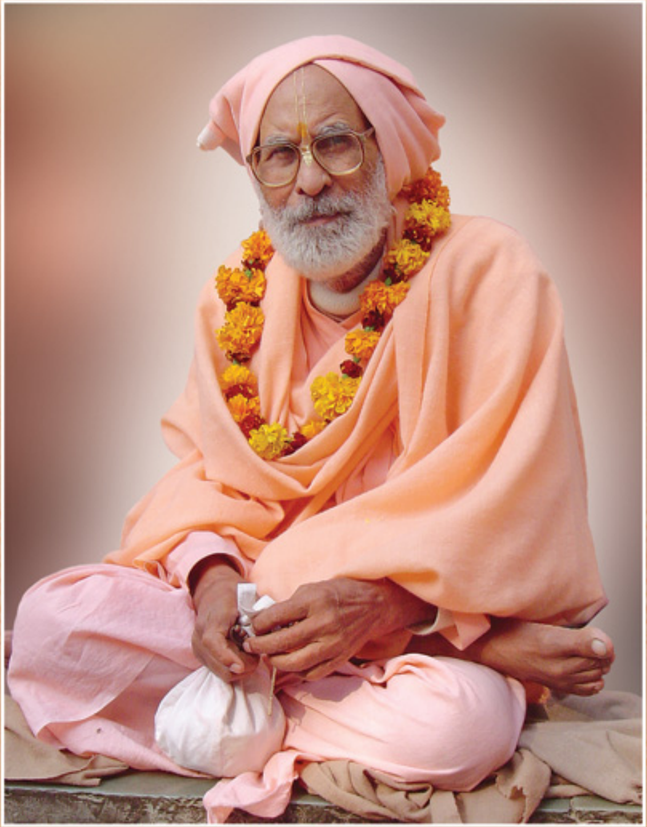

एबे यश घुषुक त्रिभुवन
हे श्रील गुरुदेव!
आपकी महिमा और यश तीनों लोकोंमें विघोषित हो।